सूची

प्रकाशककी ओरसे

बहुत समयसे समितिकी ओरसे अेकाकी नाटकोंका अेक संग्रह प्रकाशित देखनेकी अिच्छा थी, और संग्रह भी प्रतिनिधि संग्रह।

अिच्छा थी कि पंजाबी, गुजराती, बंगला, मराठी तथा हिन्दीके अैसे ही अेकाकी-नाटक चुने जॉयें जो अपनी-अपनी भाषाके वाङ्मयके प्रतिनिधि कहला सकें। अिसी दिशामें मित्रोंकी सहायतासे प्रयत्न भी किया गया। हमें हर्ष है कि हम 'जीवन और प्रीति' के संपादक सरदार अिन्द्रसिंह चक्रवर्तीका 'शाही-कैदी' मूल पंजाबीसे अनुवादित कराकर प्रकाशित कर रहे हैं। अेकांकी-नाटकोंकी विशिष्टताकी दृष्टिसे पाठक ही अिसका मूल्यांकन करें; किन्तु हमें पंजाबमें बलिदानकी जो अूँची परम्परा है, यह अुसका प्रतिनिधि लगता है।

'चिनगारी' तो अिसी युगकी चीज़ है और 'शाही-कैदी' की अपेक्षा कहीं अधिक मानवीय।

'समुद्रगुप्त पराक्रमांक', 'ज्ञीवन' तथा 'मा-बाप'—तीनों प्रसिद्ध नाटककारोंकी रचनाअें हैं। 'शाही-कैदी' और 'चिनगारी' की तरह अनुदित होकर हिन्दीमें नहीं आयीं, ये मूलरूपसे हिन्दीमें ही लिखी गयी हैं।

हमे खेद है कि प्रयत्न करनेपर भी हम गुजराती और बँगलाके कोअी नाटक नहीं प्राप्त कर सके।

श्री भूपटकरजीने अिस संग्रहके लिये जो भूमिका लिख देनेकी कृपा की है, अुसके लिये हम अनके कृतज्ञ हैं।

२५-३-४७ आनन्द कौसल्यायन

भूमिका

साहित्यकी अभिव्यक्तिके जितने विभिन्न प्रकार हैं अुन सबमें नाटकको सबसे अधिक महत्वका स्थान दिया जाता है, क्योंकि नाटक पढ़ा भी जाता है और देखा और सुना भी। अधिक अिन्द्रियाँ अुपयोगमें आनेके कारण अुसका परिणाम अधिक स्थायी होता है। नाटक जब खेला जाता है तब अुसमें पाँचों ललित कलाओंका संगम होनेसे अुसका प्रभाव अधिक गहरा होता है। अेक बात यह भी है कि नाटक हम अन्य जनोंके साथ देखते है, अिसलिये हमारे सुख-दुख और अन्य जनोंके सुख-दुख समान हैं अिस ज्ञानसे हममें सामाजिकताका भाव बढता है। अैसे प्रभावशाली साहित्यकी अभिव्यक्तिका ही नवीनतम विकास 'अेकांकी' है। अेकांकी अिस युगकी आधुनिकतम चीज है। अिसका मतलब यह नहीं कि अिससे पूर्व हमारे तथा पश्चिमके साहित्यमें अेकांकी थे ही नहीं; लेकिन अेकांकीको नाटकीय अुच्च गुणोंकी अेक स्वतंत्र रचना होनेका जो स्थान प्राप्त हुआ है वह बिलकुल नया है। अिसके लिये कुछ बाह्य कारण भी जिम्मेवार हैं। स्व० श्री सूर्यकरण पारीक लिखते हैं—"जीवनकी दौड़में निरन्तर व्यस्त रहनेवाले आधुनिक मानव-समाजके लिये समयका मूल्य बहुत बढ़ गया है। अब बडे-बड़े नाटकों, अुपन्यासों और महाकाव्योंको सम्पूर्णतः पढ़ने और सुनने अथवा देखनेके लिये न तो अवकाश मिलता है और न मानव-समाजकी

शतधा विभक्त अभिरुचि ही धैर्यके साथ स्थायी रूपसे अुनपर टिक सकती है। परिणामतः आधुनिक लोक-रुचि नाटकोंके स्थानमें अेकांकी नाटककी ओर, अुपन्यासोंके स्थानमें गल्पों और छोटी कहानियोंकी ओर, महाकाव्यके बदले मुक्तक-कविताओं अथवा गीतोंकी ओर प्रवृत्त हो गयी है।" समाजकी अिस मनस्थितिमें सहयोग दिया रेडियोके प्रोग्रामोंने। रेडियोके कार्यक्रमको आकर्षक बनानेमें 'अेकांकी' प्रयोगोंका बड़ा हाथ है।

सम्पूर्ण नाटक और अेकांकी

कलाके माध्यमके नाते अेकांकी स्वतंत्र रूपसे प्रशंसनीय है। साधनोंकी मितव्ययता अुसका प्रधान गुण है। अेक नाटकीय प्रभाव निर्माण करना और वह भी साधनोंकी अत्यन्त कतर-ब्योंतके साथ यही अेकांकीका अुद्देश्य है। हाँ, शर्त यह है कि साधनोंकी मितव्ययता प्रभावकी तीव्रतामें कमीका कारण न हो। अेकांकीकी सबसे सफल पद्धति वह है जो ब्राअुनिंगने अपने मोनोलाग्जमें प्रयुक्त की है। जीवनके किसी संघर्षमय बिन्दुको लेकर 'अेकांकी' में व्यक्तिका सारा अितिहास सूचित किया जाना चाहिये। किन्तु दर्शकके लिये यह सब कुछ अनपेक्षित और अिशारा मात्र होना चाहिये। वर्तमानको चित्रित करते समय अतीतका चित्रण और भविष्यत्की सूचना भी रहे।

अेकांकीका सबसे महत्वका कलात्मक अंग है 'सम्पूर्णता' (Totality) या प्रभावकी अेकात्मता (unity of effect)। प्रभावकी अेकात्मताको सिद्ध करनेके लिये अेक निरन्तर समान-रस

विषयकी आवश्यकता है। अिस विषयका संकेत अेकांकीके प्रारम्भमें ही किसी न किसी रूपमें मिलना चाहिये। चूँकि अेकांकी अेक छोटी नाटकीय अभिव्यक्ति है, अिसलिये विषयोद्‌घाटन जितना शीघ्र हो अुतना अच्छा है।

किसी प्रभावपूर्ण विषयकी नाटकीय अभिव्यक्तिके लिये अेकही प्रभावपूर्ण घटना आवश्यक है, जो अन्तमें चरम सीमाको पहुँच जाती है।

काल सीमित होनेके कारण अेकांकीकी कथावस्तुमें विषयान्तरके लिये कोअी अवकाश नहीं रहता। यही कारण है कि अेकांकीका चरित्र-चित्रण जल्द और स्पष्ट होता है। अुसकी कथावस्तुपर प्रारम्भसे अन्ततक अेकही विषयकी छाप रहती है। अेकांकीकी कथावस्तु मनुष्यकी मनोवृत्ति और जीवनकी भौतिक परिस्थितिके परस्पर घात-प्रत्याघातसे बनती है। यह सब घात-प्रत्याघात किसी अेक प्रबल विचारधाराके रंगमें रंगे रहते हैं।

संक्षेपमें अेकांकी सम्पूर्ण नाटकसे अुतनाही भिन्न है जितनी कहानी अुपन्याससे है। अंतर केवल लम्बाअीका ही नहीं है। सफल अेकांकी न संक्षिप्त नाटक है और न अुसका विस्तार कर अुसे सम्पूर्ण नाटक बनाया जा सकता है।

अुद्देश्यकी सिद्धि 'दुःखान्त' से लेकर 'प्रहसन' तकसे हो सकती है क्योंकि अेकांकी बहुत ही थोड़े समयमें खेला जाता है, अिसलिये साधनोंकी अधिकसे अधिक मितव्ययता अुसके लिये अनिवार्य है। दुर्बल अुपोद्‌घात, नीरस और अनावश्यक संभाषणोंके लिये अेकांकीमें स्थान नहीं है।

अेकांकीका स्वरूप

कथावस्तु-अेकाकी नाटककी कथावस्तुके लिये अेक मार्मिक प्रसंग पर्याप्त होता है। मनुष्यके चारों ओर फैले हुअे जीवनकी किसी समस्याको, अितिहासकी किसी अेक घटनाको, कहानी या अुपन्यासके किसी अेक प्रसंगको लेकर अेकांकीकी रचना हो सकती है।

चरित्र चित्रण। अेकांकी नाटकमें स्थान और कथावस्तुकी कमीके कारण व्यक्तिका पूरा चरित्र चित्रित नहीं हो सकता किन्तु जो अंश भी चित्रित किया जाय अुससे व्यक्तिके समूचे चरित्रका आभास मिल जाना चाहिये।

चरित्र-चित्रणकी सफलताके लिये यह आवश्यक है कि दैनिक जीवनमें व्यक्तियोंके चरित्रोंका अध्ययन सहानुभूतिपूर्वक किया जाय और प्राप्त अनुभवका अुपयोग चरित्रोंके निर्माणमें किया जाय।

चरित्रोंका विकास तर्क-सगत होना चाहिये। यदि अुसमें कोअी विशेष परिवर्तन होनेवाला हो तो अुसके लिये दर्शकोंको पहलेसे तैय्यार कर रखना चाहिये।

अेकांकीके चरित्र अेक दूसरेसे भिन्न होने चाहिये और यह विभिन्नता अेक दूसरेके प्रति अुनके दृष्टिकोणमें, अुनकी कृतियोंमें तथा अुनके कथनोंमें प्रतिबिम्बित होनी चाहिये।

चरित्र और अुनकी कृतियाँ मानवीय होनी चाहिये, वे अति मानवीय न हों।

रचना। अुद्‌घाटनमें प्रसंग स्पष्ट किया जाता है, चरित्रोंका परिचय कराया जाता है तथा जो घटनाअें अेकाकीके पहलेकी हों, अुनकी जानकारी दी जाती है।

अुलझन नाट्यका प्रसंग अधिक पेचीदा बनता है। कुछ नवीन व्यक्तियों अथवा घटनाओंके कारण अुलझन और बढ़ती है। कभी-कभी अुद्घाटन और अुलझन अेक दूसरेमें मिले होते हैं।

चरम सीमा जहाँ अेकांकीकी भावना परमोच्च बिन्दु-पर पहुँच जाती है अुस स्थलको चरम सीमा कहते हैं। अेकसे अधिक भी चरम सीमायें हो सकती हैं, अुस दशामें गौण चरम सीमाके बाद प्रधान चरम सीमा आती है। बाह्य अथवा आन्तरिक संघर्षके अनुसार 'चरम सीमा' भी बाह्य या आन्तरिक होती है। कभी-कभी दोनोंका मिश्रण हो जाता है।

घटनाका झुकाव घटनाका अन्तिम सुलझाव अधिकांशमें 'चरम सीमा' के साथ ही अुपस्थित होता है।

सन्देहजन्य कुतूहल और विस्मय—लार्ड अुनसेनीके मतमें अेकांकीका सबसे महत्वका अंग सन्देह-जन्य कुतूहल और विस्मय ही है अन्य कुछ नहीं।

सम्भाषण—सम्भाषण कभी महत्वपूर्ण कल्पनाओंको दुहराता है आर अुनको अधिक व्यापक बनाता है, कभी कल्पनाओंका अुल्लेख करता है जो कि तर्क या बुद्धिसे सुसम्बद्ध हो। परतु वातावरण निर्माण करना, चरित्रोंपर प्रकाश डालना और वास्तव जीवनका आभास निर्माण करना संभाषणका मुख्य कार्य है। श्री. जे. अेस. सिंहने कहा है "प्रत्येक भाषण रुचिकर होना चाहिये और वक्ताका वैशिष्टपूर्ण परिचय अुससे मिलना चाहिये। सभाषण स्वाभाविक होने चाहिये। अिसका मतलब यह नहीं कि वह वास्तविक जीवनके भाषणोंकी सही-सही

नकल हो। अन्य कलाओंकी भाँति नाटक जीवनकी केवल प्रति-कृति नहीं है। नाटकमें चुने हुअे कच्चे मसालेको करीनेसे सजाया जाता है, ताकि नाटकके द्वारा जीवनका पुनर्निर्माण हो और अुसकी व्याख्या की जा सके।"

हिन्दीके अेकांकियोंका अितिहास

हिन्दी साहित्यके अितिहासपर सरसरी निगाह डालनेसे यह ज्ञात होता है कि भारतेन्दु हरिश्चद्रके पहले नाटकोंका निर्माण हिन्दीमें न हुआ था। अिसके चार कारण हैं:

(१) अैतिहासिक अनिश्चितता—सारा भारत हिन्दीके जन्मकाल से ही आतरिक तथा बाह्य सघर्षोंका शिकार हो रहा था। समय और धनसापेक्ष नाटक जैसे साहित्यके विशेष अंगको पुष्ट करनेका अवकाश न था, (२) समर्थ गद्यका अभाव, (३) नटोंके प्रति घृणा और अनादरका भाव, (४) साहित्यकारोंमें काव्यकलाके स्वरूपको विकासित करने और असको लेकर पाडित्य-प्रदर्शनकी प्रवृत्ति थी।

भारतेन्दुके समयमें राष्ट्रीय चेतनाका भाव जागृत हो रहा था। साहित्य भी समयके साथ चलनेका प्रयत्न कर रहा था। भारतेन्दुने नाटक रचनाके मार्गकी कठिनाअियोंकी परवाह न करके लिखनेका निश्चय किया।

भारतेन्दु हिन्दीके नाटकोंका सूत्रपात करनेवाले व्यक्ति थे। वे नाट्यशास्त्रके अनुसार रूपक, अुपरूपकके विविध भेदोंको स्पष्ट करनेके लिये अुदाहरणकी भाँति अेक-अेक रचना देना चाहते थे।

संस्कृत रूपक—अुपरूपकोंके कअी विभेदोंके आपने अनुवाद किये अिनमेंसे कुछ अेकांकी थे। पर भारतेन्दु केवल प्राचीन परिपाटीको अुद्घाटित करनेवाले ही न थे, नयी प्रणालीको अुपस्थित करनेकी चाह भी अुनमें थी। अिसलिये आपने 'भारत दुर्दशा' तथा 'भारत जननी' जैसे अेकांकी भी प्रस्तुत किये।

श्रीराधाचरण गोस्वामी अिस कालके अेकांकीकारोंमें सबसे अग्रगण्य हैं। 'श्रीदामा', 'सती चन्द्रावली', 'अमरसिंह राठौर', आदि अुनके अेकांकी हैं।

पंडित बालकृष्ण भट्टने "जैसा काम वैसा परिणाम", "कलिराजकी सभा", 'रेलका विकट खेल', 'बालविवाह'; पंडित प्रताप नारायण मिश्रने 'कलिकौतुक'; बाबू राधाकृष्णदासजीने 'दुःखिनी बाला'; पं० अंबिकादत्त व्यासने 'कलियुग और घी'; श्री किशोरीलाल गोस्वामीने 'चौपट चपेट' आदि अेकांकी लिखे हैं। अिन अेकांकियोंमेंसे बहुतसे तो केवल कथोपकथनके रूपमें होनेके कारण ही नाटक कहे जा सकते हैं, अुनमें नाटकत्वका अभाव है। कुछ अैसे भी हैं जो नाटक ही कहे जा सकते हैं किन्तु केवल अंकोंमें विभाजित न होनेके कारण अेकांकीकी कोटिमें रखे गये हैं। अिन अेकांकियोंमें किसी नाटकीय मानदंडका पता नहीं चलता, कोअी सुनिश्चित प्रणाली नहीं विदित होती। लेखकोंने नाटकोंको केवल अेक शैली-भेदके रूपमें ग्रहण किया, खेलनेकी दृष्टिसे बहुत कम नाटक लिखे गये।

हिन्दीमें अेकांकियोंका विकास

हिन्दीके अेकांकियोंके विकासपर विहंगम दृष्टि डालनेपर प्रधान रूपसे तीन अवस्थाअें दिखाअी देती हैं:

पहली अवस्थामें केवल संस्कृत नाट्यशास्त्र और पाश्चात्य नाटकीय प्रणालीका ही प्रभाव नहीं पड़ा, कुछ नाटकोंपर रंगमंचका भी प्रभाव था। सुयोग्य और सुप्रसन्न रंगमचके अभावमें जनताने अपना अेक पृथक रंगमंच बना लिया था। अिसप्रकारके रंगमंचपर रास और स्वाँग होते थे। रासका सबंध कृष्ण-लीलासे होता था। अुसमें संगीत और नृत्यकी प्रधानता रहती थी। स्वाँगमें "हरिश्चंद्र लीला" "मोरध्वज लीला", "प्रह्लाद लीला", आदिका समावेश होता था।

अिस समयके अेकांकियोंमें भारतेन्दुकी रचनाओंकी ही प्रधानता थी। आपकी 'प्रेम योगिनी', 'नीलदेवी', 'विषस्यविषमौषधम्' 'सती प्रताप' आदि रचनाअें अेकांकी ही हैं। भारतेन्दुके 'नीलदेवी' नाटकको प्रो० ललिताप्रसाद शुक्ल आधुनिक अेकांकीका पूर्वरूप मानते हैं। 'विषस्यविषऔषधम्' नामक नाटकको संस्कृत प्रणालीका अेकांकी कह सकते हैं। जिसपर रंगमचका प्रभाव पड़ा है अैसे अेकांकीका नमूना हमें श्रीनिवासदासजीके 'पहले छः चरित्र'में मिलता है।

प्रारंभिक अेकांकीकारोंमें अेकांकी लिखनेका संकल्प न था, वे नाटक लिखना चाहते थे, जिसकी कथा छोटी बनी, वह अेकांकी हो गया। अिस समय तक अेकांकीने नाटकोंसे पृथक अपना कोअी स्थान नहीं बना पाया था। दूसरी अवस्थामें अेकांकी संबधी यह चेतना जागृत हो अुठी थी कि अेकांकी अेक स्वतंत्र अभिव्यक्ति है, अुसका अपना अेक तंत्र है।

दूसरी अवस्थाके विकासका अगुवा प्रसादजीका 'अेक घूँट' है। 'अेक घूँट' मे अेकांकीके वर्तमान तंत्रका निर्वाह हुआ है। जीवनकी

विनोदपूर्ण और काव्यमय झाँकी अुसमें हमें मिलती है। 'अेका घूँट'में दृश्य परिवर्तन नहीं होता। जिस प्रसंगसे नाटकका आरंभ होता है वहीं अुसकी समाप्ति भी। समयका सकलन भी निर्दोष है। पूरे नाटककी घटनामें अुतनाही समय लगेगा, जितना वास्तवमें अैसी घटनामें लगता।

अिस कालमें तीन प्रकारके अेकांकीकार मिलते हैं। पहले वे लोग हैं जिन्होंने 'प्रसाद' की तरह कल्पनाके छोटे कथानकको अपनी प्रेरणासे तथा बँगला साहित्यके प्रभावसे छोटे कथानकका रूप दिया और अुसमें सहज सुदरता लानेका प्रयत्न किया। सूर्यकरण पारीक, सुदर्शन, जैनेंद्रकुमार, चद्रगुप्त विद्यालंकार, पं० गोविंदवल्लभ पंत, आदि अिस वर्गके लेखक हैं।

दूसरे वर्गमें वे है जिन्होने अेकांकीके तत्रको, अुसके साहित्यिक मूल्यको समझा, गुना और लिखा। अिस वर्गके लेखकोंमें श्री 'भुवनेश्वर' का नाम लिया जा सकता है।

तीसरे वे, जिन्होंने अेकांकीके–तत्रको पूरी तरह समझा पर अपनी मौलिक वस्तुके लिये पोशाककी भाँति अुसका अुपयोग किया। पाश्चात्य तंत्र स्वीकार तो किया परन्तु अपना बुद्धिवाद, अपनी कथा और अपना ही तर्क अुसमें प्रधान रखा। डॉ० रामकुमार वर्मा अिस वर्गके प्रतिनिधि अेकांकीकार हैं।

हिन्दी अेकांकियोंकी तीसरी अवस्था तब प्रारभ होती है जब हंसका 'अेकांकी अंक' प्रकाशित हुआ। अुस समय अेकांकीके स्वतत्र स्थान और तत्रको लेकर साहित्यिक ससारमें बड़ा वाद-विवाद

पैदा हुआ। श्री चंद्रगुप्त विद्यालंकार आदिने अेकाकियोंकी बड़ी कटु आलोचना की। लेकिन अिस विरोधके बाद भी अेकाकीने साहित्यमें अपना अूँचा स्थान बना लिया। अिस विवादके बहाने अुसके स्वतंत्र तंत्रके अस्तित्वका ज्ञान भी हुआ। नयी आशा और गतिके साथ अेकांकीने साहित्य-क्षेत्रमें कदम बढ़ाया। कितने ही तंत्र–कुशल व्यक्तियोने, अेकांकीके अूँचे धरातलपर पहुँचनेकी चेष्टा की। श्री अुपेंद्रनाथ अश्क, सेठ गोविंददास आदि अिसी प्रकारके लेखक हैं।

अिस कालमें अनेक नवीन-नवीन विषयोंको लेकर नाटक लिखे गये, नये-नये प्रकार ढूंढे गये और भाँति–भाँतिके अेकांकी लिखे गये। जो पछाहींपन दूसरी अवस्थाके कुछ अेकांकी-कारोंमें बहुत अुभरा और अुतरा हुआ था वह तीसरी अवस्थाके हिन्दीके अेकांकी-कारोंकी प्रवृत्तिके अनुकूल होकर अनकी रचनामें घुल-मिलकर अेकरस हो गया और अनकी रचनाका स्वाभाविक अंग बन गया।

अिस भूमिकाका वह अंश जिससे अेकांकीका तंत्र बताया गया है, 'Cohen's one act plays' की भूमिकाके आधारपर तैयार किया गया है तथा हिन्दी अेकांकियोंके अितिहासको श्री. सत्येंद्रकी 'हिन्दी अेकांकी' पुस्तकसे अुधार लिया है। दोनों लेखकोंके प्रति कृतज्ञ हैं।

प्र. रा. भूपटकर

शाही कैदी

सरदार इन्द्रसिंह चक्रवर्ती

पात्रः- नानू सिंह, महापुरुष, पंगतू, अंग्रेज

[सन् १८८० ओीस्वी। अपरान्ह तीन बजेका समय। शीत ऋतु। बर्माके मरगोओी नगरके बाहर। बंगलेके सामने खुला दालान, जिसके चारों ओर १२ फुट ऊंची दीवार।

बाहरकी तरफ साअिनबोर्ड जिसपर बर्मी, पंजाबी और अंग्रेजी में लिखा है "कोओी आदमी अिस बंगलेकी चहारदीवारीके अन्दर न घुसे। न कोओी चीज अिसके अन्दर फेंके, न अिसके अन्दरसे कोओी चीज ले। यदि कोओी अिस आज्ञाका अल्लंघन करेगा, तो अुसे कडीसे कड़ी सजा दी जाअेगी जो सात सालसे लेकर अमर कैद तककी हो सकती है।"

बंगलेके आंगनमें धूपमें अेक चौकी रखी है, जिसपर सफेद अूनी आसन बिछा है। अेकओर पुस्तक, अूनकी माला तथा रूमाल रखा है और दूसरी ओर पड़ा है लोहेका अेक बड़ा गडुवा।

चौकीपर काला कम्बल ओढे पद्मासन लगाअे अेक तेजस्वी मूर्ति विराजमान है। अभी अभी स्नान समाप्त हुआ है। सिरके गीले केश सूखनेके लिये पिछली ओर झूल रहे हैं। कभी कुछ देरतक पुस्तक पढनेमें मग्न रहता है, तो कभी आंखें बन्द कर समाधिस्थ हो ध्यानमें लवलीन हो जाता है। वह शाही कैदी है।

सेवकी तरह चमकता हुआ चेहरा। चादी के तारों जैसी सफेद लम्बी दाढ़ी। आखोंमें मस्ती। नोकदार नाक। लम्बी गरदन। बिना झुकी हुअी सीधी सुडौल कमर। भावपूर्ण किन्तु दृढ़ता लिये हुअे होंठ। मस्तक साफ़। चेहरेपर दाग़। लम्बे हाथ। आयु कोअी ५५-५६ के बीच।

चौकीके पास ही ज़मीनपर लगभग अिसी आयुका अेक और आदमी बैठा है। यह आपका सेवक है अिसने भी पालथी लगा रखी है। केश सुखानेके लिये पिछली तरफ फैले हैं। मनही मनमें कुछ पढ़ रहा है।

बंगलेके चारों ओर कंधेपर बन्दूक रखे, संगीने लिये अंग्रेजी और मद्रासियोंका सख़्त पहरा।

[चौकीपर बैठा शाही कैदी हाथ जोड़कर अरदास[१] कर चुकनेपर किसी गम्भीर विचारमें डूब जाता है।]

नीचे बैठा हुआ आदमी, जिसका नाम नानू सिंह है, बड़े अदबके साथ कहता है-

नानूं सिंह क्यों पातशाह, क्या आज फिर कुछ कुछ तबियत खराब है? सकुशल तो हैं?

शाही कैदी नहीं, कोअी तकलीफ नहीं। नानूं सिंहजी मैं हर तरहसे प्रसन्न हूं।

नानूं सिंह तो, जो चेहरा सदा खिला रहता है, चमकता रहता है, आज फीका फीका क्यों दिखाअी दे रहा है? होठोंपरकी

१ संसारके कल्याणकी प्रार्थना।

मीठी मुस्कराहट क्या हुअी ? माथेपर चमक नहीं ! आंखोंमें सरूर भरी मस्ती नहीं ! मुंह पर तेज नहीं, नूर नहीं ? अिसका क्या कारण है ?

शाही कैदी कारण, और तो कुछ नहीं, आज बैठे बैठे मातृभूमिकी याद आ गयी है। सब तरहसे सुख है, लेकिन संगतसे पृथक होनेका दुःख महान् है। अिस दुःखको तो अकाल पुरुष ही दूर कर सकता है। जब चाहेगा, मिटा देगा।

[गला भर आता है। आंखों से आंसू बह निकलते हैं। लम्बी सांसके साथ आंसूकी धार दाढ़ीपर होती हुअी नीचे गिरती है]

नानू सिंह वतनकी याद! सगतसे अलहदा होनेका दुःख! अुस वतनकी याद जिसके पुत्रोंने भर पेट गद्दारी की। देश स्वतंत्र करनेकी योजनाका विरोध किया। आपको जलावतन कराया।

सगत! सगत बिचारी क्या करती? अुसके हाथ-पैर आपकी "अहिंसा" की रस्सी से बधे थे। जरा दे देते खुली लड़ाअीका हुक्म, फिर देखते कि अेक भी जालिम विदेशी जिंदा बचकर न जा सकता अब लम्बी सासें लेने से क्या होता है?

शाही क़ैदी नानू सिंहजी! आप तो अिस तरह बातें करते हैं, मानो देशकी आज़ादीके लिये मैंने जो कुछ किया है वह किसीके सिरपर अहसान लादा है। नहीं, मातृभूमिकी स्वतंत्रताके लिये प्रयत्न करना हर अुस आदमीका कर्तव्य है, जिसका शरीर मातृभूमिकी मिट्टीसे बना है। जो अपनी जननी जन्मभूमिको

गुलाम देखकर आंसू नहीं बहाता, अुसको स्वतंत्र करनेका प्रयत्न नहीं करता, अुसका दुःख देखकर तड़प नहीं अुठता, वह गुनहगार है; अुसे मनुष्य कहलानेका अधिकार नहीं। वह जीवित पशु है, लेकिन मृतके समान है।

नानूं सिंह तो आंसू बहानेका फायदा? चलते समय भी यदि अिशारा कर आते "खबरदार! सम्हलकर रहना। मेरा बदला जरूर लेना। आदमी तो अेक दो भी कम नहीं होते, आपके पास तो हजारों लाखों थे अैसे जो हंसते हंसते फांसी चढ़ सकते हैं, तोपके आगे सीना तान सकते हैं। क्या वह आपकी और आपके वतनकी आजादीके लिये कुछ नहीं कर सकते थे?

शाही कैदी कर क्यों नहीं सकते थे। मुझे अभिमान है अपने पुत्रोंपर, मुझे फख्र है अपने देशवासियों पर, लेकिन नानूं सिंहजी आप नहीं जानते, 'तलवारसे प्राप्त की हुअी चीज़ तलवारसे ही खोअी भी जाती है।'

अहिंसाका सिद्धान्त ही यही है कि ताकत होते हुअे भी अपनेपर संयम रखा जाय। बल होते हुअे भी अुसका प्रयोग न किया जाय। निर्बलकी अहिंसाका तो कुछ अर्थ नहीं? चूहे यदि बिल्लीको क्षमा कर दें, तो अुनकी क्या बहादुरी? हां, यदि शेर गीदड़को अपना भाअी समझ अभय कर दे, तो यह असली अहिंसा है। मैं अिसीका प्रचार करनेके लिये यह दुःख काट रहा हूँ। यह दृश्य मैं नहीं देख सकता कि अेक आदमी दूसरेकी जान लेनेके लिये पागल जानवरकी तरह वहशी बन जाय।

मेरा अहिंसात्मक असहयोग और सत्याग्रहका तरीका अैसा ठीक था कि यदि मेरे देशवासी अुसके अनुसार चल सकते, तो विदेशी सरकार स्वयं ही शीघ्र विदा हो जाती। लेकिन देशका दुर्भाग्य! (ठंडी सास लेते हैं)

नानू सिंहजी! अब फिरंगियोंकी जड़ खोखली हो चुकी है, यदि अुनपर हाथ अुठा देते तो वह पातालमें चली जाती।

आपको मालूम होना चाहिये जो मज़ा क्षमा कर देनेमें है, वह बदला लेनेमें नहीं।

नानू सिंह पातशाह! आप जानें! मैं मोटी अकल का, मालिक, अिन बारीकियों को क्या जानू। हा, अितना अवश्य जानता हू कि यदि आप आज्ञा दे देते, तो कुछ का कुछ हो जाता। नैपाल आपके साथ था, काबुल आपका अिशारा चाहता था, रूससे आपके पास सदेश आ रहे थे।

अभी भी क्या बिगडा है! आपके भ्राता आपसे ही हैं। कोअी न कोअी पजाबसे मिलनेके लिये आता ही रहता है। अुनके नाम हुकम भेज देना। जिन्होंने पुत्रोंसे बढ़कर प्यारी संगतसे, भरत जैसे भाअीसे, हिचकियां लेते पितासे, बेहोश होती बेटी नंदासे पृथक् कर अिस विदेशमें ला पटका है, वह तो सुखसे न रहें।

शाही कैदी फिर वही बात। मेरे दिलमें तो बदला लेनेका ख्याल ही नहीं आता। मुदअीका भी भला करना मेरा जीवनादर्श है। मै खूनका बदला खूनसे नहीं लेना चाहता, मैं तो खूनके बदलेमें प्यार देना चाहता हूं। मै नफरतको नफरत करता हू, बैरसे मुझे बड़ा बैर है।

यह ठीक है कि नैपाल मेरे साथ था। यह भी ठीक है कि मुझे रूससे सन्देश आ रहे थे। और यह भी ठीक है कि अमीर काबुलने अपने अेलची मेरे पास भेजे थे; लेकिन मैंने अपने देशमें किसी बाहरीका पैर पड़ने देना नहीं चाहा। मैं चाहता था कि हिंदुस्तानके वासी आज़ादीकी कीमत समझ कर अुसकी क़दर करना जान जायँ; फिर वह कभी गुलामीको पसंद न करेंगे। और तो और मैं अुस आजादीके लिये भी खून बहाना पसन्द नहीं करता। मैं दुश्मनको भी प्यारकी तलवारसे बिस्मल करना चाहता हूं।

भाअी हरिसिंहजी तो मुझसे भी अधिक अहिंसक और शान्तिप्रिय हैं। वह तो पशु-पक्षीका दुख देखकर भी सहन नहीं कर सकते। हिंसा जैसा निकृष्ट कर्म करना तो वह पसन्द ही नहीं करते।

मैं अुस स्वर्ण युगकी प्रतीक्षा कर रहा हूं, जब भारतवासियोंके दिल स्वतंत्र होनेके दृढ़ निश्चयके साथ, स्वतंत्रताकी आशासे भर जायंगे। जब वह अिसकी क़ीमत समझ लेंगे, तो वह गुलामीकी जंजीरोंको चाहे वह सोने की ही क्यों न बनी हो कभी पसन्द न करेंगे।

नानूं सिंह तो लीजिअे बहाअिअे आंसू। क्या पिताजीको अन्त समय दर्शन देनेकी प्रतिज्ञा भी भूल गअे है?

शाही क़ैदी याद है, अच्छी तरह याद है।

नानूं सिंह तो फिर क्या करेंगे?

शाही क़ैदी भूल गअे। जैसे राय सिंहको शेर से बचाया था, अुसी तरह जाअूंगा। पिताजीको दरशन देकर वचन पूरा करूंगा। संत जीवनसिंहजी चुन्हीवाले अिसके साक्षी होंगे।

ओह ! नानूं सिंह जी ! मुझे कौन रोक कर रख सकता है। यह जो कुछ हो रहा है, सब अकाल पुरुषकी ही आज्ञासे हो रहा है, वह जब चाहेंगे तो अेक दुःख क्या हजारों दुःख दूर कर देंगे।

नानू सिंह पातशाह ! आप समर्थ है। सब कुछ कर सकते हैं। जब चाहे देश जा सकते हैं। जिससे चाहो मिल सकते हो, दर्शन दे सकते हो। लेकिन मैं क्या करूं ? देशकी याद, परिवारका वियोग कलेजे को छलनी किअे डालता है। दूसरी तरफ आपको अकेला छोड़नेको भी जी नहीं करता।

शाही कैदी वतनकी याद मुझे कब भूली है, वह ठण्डी सांस लेती संगत, वह रोती हुआी बेटियाँ, वह विलाप करनेवाला पिता, वह अन्दर ही अन्दर जलनेवाला, अिस सदमेको बर्दाश्त न कर सकनेवाला शून्यवत खड़ा भाओी—नज़ारा कहीं भूल सकता है !

नहीं, अभी मैं सब कुछ भुला दूंगा। दिलसे तो शायद नहीं। जब तक मेरा देश आज़ाद नहीं होता, जब तक धर्म जारी नहीं होता, गअू-गरीबके गलेसे छुरी नहीं अुतरती, मेरा आदर्श पूरा नहीं होता, अुतनी देर तक मैं किसी बातको दिलमें नहीं रखूंगा; मैं अपने बलवले, अपने जजबे. अन्दर ही अन्दर ज़ब्त करूंगा।

नानूं सिंह मै क्या करू ? कुछ मुझे भी बताअें।

शाही कैदी जिस लगन, जिस प्यारके साथ आपने मेरी निष्काम सेवा की है, अुससे मेरा रोम रोम प्रसन्न है। क़ैदी मै हूं, आप नहीं; आप जब चाहें जा सकते हैं।

नानूं सिंह—आपको अकेला छोड़कर यह मैं कैसे कर सकूंगा ?

शाही कैदी चिन्ताकी कोअी ज़रूरत नहीं। अब मैं अकेला ही प्रसन्न रहूंगा।

नानू सिंह यह नहीं हो सकेगा। सेवा कौन करेगा, वस्त्र कौन धोयेगा। आप तो बेपरवाह हो। आपके शरीरकी देख-भाल कौन करेगा ?

शाही कैदी——यह सारी चीजें तो मैं चलते समय वहीं छोड़ आया हूँ। तभी तो कीनखाब, मखमलें, अतलसें अुतार कर (कंबली की ओर प्यार भरी नज़र डालते हुअे) यह पहनी थी। बिस्तरेकी जरूरत ही कब हुअी है। जमीनपर सोया करूंगा। पैर कौन दबायेगा! कैदीके पैरोंको कौन मालिश करता है ?

नींद आयेगी तो सो जाया करूगा। संगतका बिछोड़ा, देशका वियोग, भाअीकी याद, पुत्रीका विलाप, कभी सोने देगा ? जैसे अब सोता हूँ। आप कोअी फ़िकर न करें, यह खेल यूं ही होना है।

मेरे शरीरकी कुछ फिकर नहीं, जब तक धर्म जारी नहीं होता, गअू-गरीबका दुःख दूर नहीं होता, मेरा देश आजाद नहीं होता, तब तक अिस शरीरका कोअी कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

नानूं सिंह—तो देश जानेके लिये दरख्वास्त दे दूँ ?

शाही कैदी जरूर। लाओ कलम दावात, मैं लिखूंगा कि नानू सिंहकी अब मुझे ज़रूरत नहीं। मैं अकेला रहना चाहता हूं। अिनपर कोअी जुर्म भी नहीं है। इन्हें वापिस कर देना चाहिये। यह अब मेरी सेवा नहीं कर सकते।

नानूं सिंह पातशाह ! जब तक जान है, आपके चरणों पर कुरबान हुआ रहूंगा। ऐसा न करें, बेसिदक * करके न मारें

शाही कैदी इस तरहसे तू बन्धन-मुक्त हो जायेगा। साथ हो अब जो जो होनेवाला है, अुसे तू वहन भी नहीं कर सकेगा। साथ ही फिर तुझे कोअी जाने भी नहीं देगा। अभी समय है, कलम-दवात ले आ।

[नानू सिंह ज़ोर ज़ोरसे रोता हुआ, कलम-दवात लेने जाता है]

नानू सिंह [कमल-दवात पास रख कर] अितने दिन जो सेवा की, क्या अुसका यही फल देना था ? तुम्हारे लिये घर छोड़े, बाहर छोड़े, पुत्र छोड़े, परिवार छोड़े, अब आपको भी छोड़ रहा हूँ। [ज़ोर ज़ोर से रोता है]

शाही कैदी नानूं सिंह ! अिस तरह बच्चोंकी तरह न कर; मैं तुझे खुशी खुशी भेज रहा हूँ। मै स्वयं भी जल्दी आअूंगा। जा, जाकर मेरी पुत्रो से बढ़कर प्यारी संगतको, मेरे जिगरके टुकड़े भाअी हरिसिंह को तथा पुत्री नंदा को कहना कि भजन आदि करनेमें मुस्तैद रहे। मैं हमेशा साथ हूँ। लोग चाहे कुछ भी कहें, लेकिन यह कभी न समझना कि मेरा शरीर नहीं रहा। जब तक धर्म नहीं जारी होता, मैं कहीं नहीं जाता। अिसी शरीरसे आअूगा। लेकिन आअूगा अुस समय जब सफाया हो जायगा; यह कुत्तोंकी तरह हमेशा हमारा पीछा नहीं किया जा सकता। यह सब होनेवाला

* आजतक आत्मसमर्पण किये रहनेवालेको 'अविश्वासी' घोषित करना।

है। होगा तो आटा, नहीं तो दलिया जरूर होकर रहेगा। राजा तथा प्रजा दोनों का।

अब मेरे पास कोअी न आये। मेरा पता नहीं लग सकेगा। जितना खर्च यहां आनेके लिये करना है, वह भूखोंके मुंहमें डालना। लंगर* की सेवा करना। मैं अब स्वयं ही संगतसे भेंट करूंगा। (कलम-दवात लेकर नानूं सिंह की अर्जी लिखने लगते हैं। नानूंसिंह पास खड़ा बच्चोंकी तरह जोर ज़ोरसे रो रहा है।)

(परदा गिरता है)

दूसरी झांकी

समय   ९ से ११ बजे रात, सन् १८८५ औ०

दृश्य   पूर्णिमाकी रात, चांदकी दूध-धुली चांदनी।

स्थान   मरगोअीका वही बंगला, आंगनमें अेक आराम कुर्सी जिसपर शाही कैदी बैठा अेक लय, अेक खास धुनमें गा रहा है—

"साजन देस विदेसिअड़े सानेहड़े दे दी।
सार समाली तिन सजना मुध नैण भारेदी।
नैण भारेदी गुण सादे दी, किओं तिन मिला पिआरे।
मारण पंथ ना जानअु बिखड़ा किङ पाओं पै पिर पारे।
सतिगुरु सबडी मिलै बिछूनी तन मन आगे राखै।
नानक अंम्रित ब्रिख महारस कलिया मिल प्रीतम रस चाखै।

* सिक्खोंका सदाव्रत या भंडारा।

लय टूट गअी। गीत समाप्त हो गया। कुछ देर तक बंगलेमें पूरा सन्नाटा रहा। कभी कभी कोअी ठंडी सांस सुनाअी देती है। प्रकृति देवी अुसे सुन आंखोंसे झर झर आंसू बहा रही है। वे आंसू ओसकी बूंदें बन कर सरसब्ज ज़मीनके सीनेपर मोतियोंकी तरह चमक रहे है।

बाहर पहरेदार शराबकी बदहोशीमें बर्मी सुन्दरियों के साथ हंसी-मज़ाक करते हुये अबा-तबा बोल रहे हैं।

शाही कैदी- (आत्मगत) आज चारोंओर सन्नाटा है। पहरेदारोंके अतिरिक्त और किसीकी आवाज़ नहीं सुनाअी देती। मेरी झोपड़ीमें किसीने दिया भी नहीं जलाया। अरदली आया तो था, लेकिन अुसे तो मैंने स्वयं ही मना कर दिया था कि दीपक न जला। परदेशियोंकी झोपड़ीमें प्रकाशका क्या काम? दीपक मत जला, बीत गअीकी याद मत करा।

ओह! आज अिस परदेशमें कोअी भी अपना कहलानेवाला नहीं; देश पराया, बोली परायी और तो और हवा भी पराअी-जैसी, पराअी धरती, पराया आसमान। यह चांद, यह तारे, अिनमें मालूम नहीं क्यो कुछ अपनापन नहीं रहा। सभी कुछ पराया!

यह गोरे, बेदर्द गोरे, अपनी धुनमें मस्त, हुकूमतके नशेमें मस्त, शराबके नशेमें बेहोश, यह किसकी परवाह करने लगे। चाहे प्रकट रूपसे मेरा आदर करते हैं, लेकिन मनमें तो मुझे कैदी और बाग़ी ही समझते हैं। मुझे अभिमान है अपने अिस बाग़ीपनका। मुझे नाज़ है अपनी अिस अुमर-कैदपर! मुझे जब भारतमाताकी पराधीनता

याद आती है, तो अपने सब दुख भूल जाते हैं। गोरोंको देखकर मुझे कोअी दुःख नहीं होता, लेकिन अिन भारतीयों, अिन हिन्दुस्तानियोंको जब गोरोंकी ठोकरें खाते देखता हूं, तो मेरा दिल छलनी-छलनी हो जाता है। ओह भारतमाता! भारतमाताके बच्चे आज दाने दाने के लिये मोहताज हैं। बे-बस! पेटसे भूखे! अुफ!

नानूसिंहजी चले गअे। अच्छा हुआ, वह मेरे साथ क्यों दुखी होते। कोअी करे, कोअी भरे—यह अिन्साफ़ नहीं। नानूसिंहजीका कसूर भी क्या था? वैसे, मेरा भी क्या कसूर है। लेकिन वह तो मेरे कारण ही दुःख भोग रहे थे। (कम्बलीकी तरफ़ देखकर) मेरे दुख-सुखकी साथी, कभी अुदास न होनेवाली कंबली! केवल तू ही मेरा साथ निभायेगी। अब तू और मैं ही दुःख सहन किया करेंगे। देख, जिस दिन तू मेरे पास आअी, मैं लाखों दिलोंका मालिक, हजारों आंखोंकी ठण्डक और प्रकाश था। देख, आज अकेला बैठा हूं। कोअी खबर लेनेवाला नहीं। कभी अिस अेकान्तको तरसा करता था। जिधर जाता था लाखों हजारोंकी भीड़ साथ होती थी। ... ... आज अुन रूहोंको देखनेके लिये तरस रहा हूँ। सूबेदार,* किधर गये, संगत किधर गअी, पिता, भाअी, पुत्री सबसे बिछुड़ कर परदेशमें अकेला बैठा हूँ।

मेरे जीवनकी संगिनी, मेरी प्यारी कँबली! कहीं तू भी मेरे साथ रहती हुअी अुदास तो नहीं हुअी? तुझे भी मातृभूमिकी

* अुन दिनोंके पंजाबको सतगुरु रामसिंहने २२ भागोंमें विभक्त किया था और अपने २२ प्रतिनिधियों वा सूबोंके द्वारा अपना धर्म-प्रचार तथा शासनका कार्य करते थे।

याद तो नहीं आओी ? क्यों नहीं ? देशकी याद क्या कोओी भूलनेवाली चीज़ है ! ज़रूर आती होगी। देख फिकर न कर, सदा तेरे साथ अिसी तरह नहीं गुजरेगी। वह दिन जल्दी आनेवाला है, जब तू अपनी जननी जन्मभूमिका मुंह देखेगी। जब लाखों आंखें तुझे हसरत भरी नज़रोंसे देखेंगी। सदा दिन अेकही-जैसे नहीं रहते। कभी वह दिन देखे थे, आज यह भी देख। अेक समय आयेगा जब मखमलें और अतलसें तेरी ओर रशक भरी निगाहसे देखेंगी। वह तेरे चरणोंमे बैठनेको अपना सौभाग्य समझेंगी। अुदास मत हो [कॅबलीको चूमते हुअे, अुसपर प्यार भरा हाथ फेरते हैं] क्या हुआ जो नानू सिंह जी चले गये, दुनियाका कोओी भी आदमी अिस दृश्यको सहन नहीं कर सकता था। वह धन्य था जो दिनरात सताये जाकर भी जानेका नाम नहीं लेता था। अब भी तो मैंने स्वयं ही बिदा किया है। अुसकी अर्जी आप ही लिखकर भेजी है। साथ ही यदि अुसे अुस दिन वह दिल दहलानेवाला दृश्य न दिखाता, तो वह आज भी कब जानेवाला था। अुस दृश्यको देखकर कोओी भी आदमी स्थिर नहीं रह सकता था। फिर अुसका दोष कैसा ? अहा, आज मैं और तुम दोनों परस्पर प्यार करें। आज तू खुश हो, तेरा शरीक कोओी नहीं रहा। पहले तेरे प्यारका बहुत-सा हक नानूसिंहजी बांट लेते थे। आज वह चले गये। देश चले गये। हाय ! देश ! .. .. (आखोंसे आंसूकी बूंदे गिरती हैं, वे समाधिमें स्थिर हो जाते हैं, अेक सिपाही दौड़ा दौडा आता है)

महाराज ! महाराज ! (कोओी आवाज़ न आती देख, फिर) महाराज ! महाराज ! जल्दी चलें, बड़ा ज़रूरी काम है ?

शाही क़ैदी (शान्ति पूर्वक) पन्तलू [सिपाहीका नाम] क्या हुआ, ख़ैर तो है ! कहां जाना है ! अितना ज़रूरी कौनसा काम है !

पन्तलू महाराज ! मुझे कामका पता नहीं। साहबने कहा है कि महाराज को बुला ला ! अेक बड़ा जरूरी काम है !

शाही क़ैदी पन्तलू ! यह समय कामोंका नहीं। जा, जाकर आराम कर। ह ।र आनन्दमें विघ्न मत डाल। जो कुछ होगा सुबह देखा जायगा [सिपाही आदरपूर्वक सिर झुका कर चला जाता है]

शाही क़ैदी [स्वागत] क्यों बुलाया है, यह गोरे यहां क़ैदमे भी चैनकी सांस नहीं लेने देते। क्या आज फिर पंजाबसे मिलनेके लिये कोअी आया था; कोअी सिक्ख पकड़ा गया है, पता नहीं ये सिक्ख किस मिट्टीके बने हैं। सैकड़ों रुपये ख़र्च करके दुःख-सुख सहकर आते है जेल, अुमर-कैद, समुद्रमें डूबना स्वीकार करते है लेकिन आनेसे बाज नहीं आते।

भाअी धनसिंहजी गुमरीवालेने क़ैद काटी। कअी घरसे बेघर हुअे। पहले अुन्हे देश ले जाकर नजरबन्द रक्खा। फिर साल भर बाद अिधर लाकर रंगून जेलमें डाल दिया।

जिस दिन मीनासिंह जी पकड़े गये थे, अुस दिन गोरे ने मुझे आकार कहा था,— "सिक्ख आपसे मिलने के लिये आते हैं, आप अिनके द्वारा पंजाब में ग़दर मचाना चाहते हैं।" पता नहीं अिन फ़िरंगियों को बेकार शक क्यों खाये जाता है। मैं तो किसी का बाल बांका भी करके खुश नहीं, मैं अहिंसा का पुजारी

और अमन का अुपासक हूँ। अिनको अिनकी अपनी करतूतों का डर ही मारे डालता है। यदि मुझे करना होता तो अुसी दिन न करता। आज कुछका कुछ हो गया होता। मैं अपने देशको विदेशी लुटेरोंके हाथों लुटते देख वर्दाश्त नहीं कर सकता था। अुनसे अिसकी रक्षा करना चाहता था। लेकिन खून-खराबीके साथ नहीं, किन्तु शान्तिपूर्ण अुपाय से।

मैंने नानूंसिंह जी से कहला दिया था कि अब मुझे मिलने के लिये कोअी न आये। नानूंसिंह जी ने जाकर कहा ही होगा। अुसको जो शकल मैंने अुस दिन दिखाअी थी, अुसे देखकर तो बिचारा मरा ही जाता था। अुसने जाकर कहा ही होगा "रात को भले चंगे सोये थे, स्नानके समय जब जागा तो अेक भयानक-सी शक्ल मुझे खाने आअी। मेरी चीख निकल गअी। मैं बेहोश हो गया। जब होश आया तो न भूत था न वह थे। पन्तु सिरहाने चलता था। अुनका कोअी पता नहीं लगा, गोरों और सिपाहियोंने मिलकर पत्ता-पत्ता छान डाला, लेकिन कुछ पता न मिला। पता नहीं कहां चले गये, या क्या हुआ। अुसी दिन जहाज आ गया, अुस पर चढ़कर मैं देश चला आया।"

मेरे श्रद्धालुओंने अिन बातों पर कहां विश्वास किया होगा! नानूसिंहका तो कहना ही क्या, अुनको यदि परमात्मा भी कहे तब भी वे विश्वास नहीं करेंगे। धन्य हैं वे सिक्ख जिन्होंने श्रीगुरुजीके अिस वाक्यको पूरा कर दिखाया है।

'झखड़ झागी मेहू बरसै भी गुर देखन जाअी।
सुमुन्द सागर होवै बहु खारा
गुर सिक्ख लंघ गुर पहि जाअी।
जिअू धरती करै जल बरसै,
तिअु सिख गुर मिल बिग साअी।*

आज फिर कोअी अिनके काबू आ गया। चलूं, चलकर पता करूं। न मालूम गरीब के साथ क्या बीती होगी। पता नहीं क्या सजा मिलेगी? (अुठना चाहते है, अेक अङ्गरेज़ आता है) महाराज सति सिरी अकाल!

शाही कैदी सति सिरी अकाल, आओ अिस समय कैसे आना हुआ?

अंग्रेज अेक खुशखबरी सुनाने और मुबारकबाद देने आया हूं।

शाही कैदी किसी दूसरे टापूकी बदली हो गअी है, या फांसीकी सजाका हुक्म हुआ है? यदि यह बात है तो सचमुच खुशखबरी और मुबारकबादीकी बात है। जल्दी कहो। मेरी जननी जन्मभूमिकी गुलामी काटनेके लिये निर्दोष प्राणियोका

* जिस समय वर्षा और झञ्झावात चल रही हो, अुस समय भी सिक्ख गुरुके दर्शनके लिये जाता है। चाहे अत्यन्त खारा समुद्र सामने हो, तो भी गुरुका शिष्य अुसे लांघकर गुरुके पास जाता है। जिस प्रकार धरती पानी बरसनेसे सुशोभित होती है, अुसी प्रकार सिक्ख गुरुसे मिलकर विकसित होता है।

बलिदान ही कुछ रंग दिखलायेगा, साथ ही जेलकी तकलीफें सहते बहुत दिन हो गये। अिस रोज रोज के मरनेसे अेक दिनका मरना अच्छा है..........

अंग्रेज--नहीं महाराज! अिनमेंसे अेक भी बात नहीं।

शाही कैदी तो क्या पंजाबसे कोअी सिक्ख पकड़ लाया गया है?

अंग्रेज- नहीं।

शाही कैदी तो खुशखबरी और मुबारकबादीकी और क्या बात है!

अंग्रेज अभी अभी कलकत्तेसे भारत सरकारका तार आया है कि महाराजको रिहा किया जा सकता है। अिसलिये अुन्हें जहाजपर चढ़ा कर हिन्दुस्तान भेज दो।

शाही कैदी क्यो मखौल करते हो! मुझे कौन रिहा करता है। जब बिना कसूरके बांधकर यहां ले आये हैं, तो रिहा करनेका ख्याल ही किसे आ सकता है। यह तुम गलती करते हो। मेरे लिये नहीं यह हुकुम अुस डोगरे रामसिंहके लिये होगा, जो सन् ५७ के गदरसे यहां कैद है।

अंग्रेज नहीं महाराज! यह हुकुम आपके ही लिये है। वायसरायने कलकत्तेसे तार द्वारा भेजा है! अुस रामसिंह राजपूतकी तो किसीको याद भी नहीं कि जीता है या मर गया। अुसके बारेमें तो कभी किसीने कुछ पूछा ही नहीं।

शाही कैदी सच! नहीं, तुम गलत कहते हो, क्या अब गदरका कोअी खतरा नहीं, क्या अब हो-हल्ला नहीं?

अंग्रेज---लिखा है कि अब गदरका कोअी खतरा नहीं है। अिसलिये अब अिन्हें हिन्दुस्तान आने और खुले फिरनेकी कोअी मनाही नहीं है। अिसलिये बतायें कि कब चलना है ताकि जहाजका अिन्तजाम पहलेसे किया जाय।

शाही क़ैदी क्या हिन्दुस्तान आज़ाद हो गया है?

अंग्रेज नहीं।

शाही क़ैदी---तो मेरी तरफ़से कह दो कि जब तक मेरा देश स्वतंत्र नहीं होता, जब तक गअू-गरीबके गलेसे छुरी नहीं अुतरती, धर्म नहीं चालू होता, अधर्मका नाश नहीं होता, तबतक मैं भारतका मुंह नहीं देखूंगा। कैदखानोंमें पड़ा रहूंगा, जगलोंकी खाक छानूंगा, दरदर भटकता फिरूंगा लेकिन जाअूंगा तब, जब मेरी आशा पूरी हो जायेगी—भारतमें अेक भी विदेशी हुक्मरा दिखाअी नहीं देगा।

जिस गअू-गरीबके लिये मेरे लाड़लोंने हंस हंस कर जानें दीं, सैंकड़ो घर बरबाद हुये, कअी सुहागिनोंके सुहाग गये, कअी बहनें भाअीके वियोगमें पागल हो गअीं, कभी माताओंके पुत्र सदाके लिये बिछुड़ गये; अुनको जाकर मै क्या कहूंगा? यद्यपि मुझसे मिलकर अुनके सारे रोग दूर हो जायंगे, लेकिन जबतक मेरा आदर्श पूरा नहीं होता, तब तक मैं भारतका मुंह नहीं देखूंगा।

जो आग मैं जला आया हूं, वह तुम्हारे लाख कोशिश करनेपर भी नहीं बुझेगी, वह दिन प्रतिदिन भड़केगी और अुसमेंसे लपटें निकलेंगी। आज मैं और मेरा पन्थ बाग़ी है। थोड़े दिनों में सारा देश बाग़ी कहलानेमें अभिमान समझेगा।

मैं इस तरह नहीं जाऊंगा; यह मेरा फ़ैसला सरकारको सुना दो। गुलामीकी ज़िन्दगीसे क़ैद अच्छी। जब वहां जाकर भी क़ैद रहना है, अपनी मर्जी नहीं कर सकेंगे, तो फिर छोटी जेल हुअी तो क्या और बड़ी जेल हुअी तो क्या? अेक बात है आज मैं आजादीसे भी बहुत प्रसन्न हूं कि हुकूमत मुझे सच्चा तो समझती है।

अंग्रेज आजसे पहरा नरम कर दिया जायगा। बाहर सैर कर सकनेकी भी अिज़ाजत दी जायगी।

शाही कैदी आगे तुम्हारे पहरेदार मुझे कब रोक कर रख सके हैं?

अंग्रेज तो मुझे क्या हुकुम है?

शाही कैदी जो कुछ मुझे कहना था कह दिया यह मेरा आखिरी फ़ैसला है।

अंग्रेज अच्छा, फिर मैं चलता हूं। सति सिरी अकाल।

शाही कैदी सति सिरी अकाल।

(अंग्रेज़ जाता है।)

[थोड़ी देर बाद बंगलेमें आग लगी दिखाअी देती है, पहरेदार आग बुझानेकी कोशिशमें अिधर अुधर भागते फिरते नज़र आते हैं। अिस आपा-धापी (हो-हल्ले) में आप अपने बर्मी सेवकोंकी मददसे चुपकेसे जंगलमें जा पहुंचते हैं। नेपथ्यसे आवाज़ आती है कैदी भाग गया। शाही क़ैदी भाग गया।]

(परदा गिरता है)

चिनगारी

: श्री ना. सी. फडके :

[रायबहादुर सावले वकीलका वैभवशाली आफिस। बीचमें रखे हुअे टेबलके ड्राअरमें साहबकी छोटी लड़की अंजनी कुछ ढूढनेमें व्यस्त है। १७-१८ वर्षकी वह लडकी सौन्दर्य क्षितिजपर पदार्पण कर रही थी। ड्राअरोंको ढूढनेपर भी अिच्छित वस्तु न पानेपर वह कुछ खिसियानीसी हो जाती है। आखिर 'नहीं रखनी, सरकार जालिम नहीं रखनी' गुनगुनाना छोड़ कर वह पड़ोसके कमरेमें बैठी हुअी बड़ी बहन मीराको जोरसे पुकारती है....... ।]

मीरा ! ओ मीरा !

मीरा कमरेमेंसे कहती है ––क्या कहती है री ?

अंजनी नहीं मिल रही है।

मीरा ठीकसे देखो। बिल्कुल नीचेके ड्राअरमें है।

अंजनी ना, मुझे नहीं मिलती। सब तो ढूंढ लिया।

मीरा कैसी पगली लड़की है !

अंजनी अच्छा, मैं पगली और तुम सयानी ! तुम ही आकर देखो और अपना सयानापन दिखाओ।

[अितना कहकर वह टेबुलके पाससे हट जाती है। मीरा स्वयं आकर देखने लगती है। अंजनी फिरसे अपना 'नहीं रखनी नहीं रखनी' वाला गीत शुरू कर देती है। मीरा भी तन्मय होकर अुसके साथ गाने लगती है, अितनेमें वकील साहबका क्लर्क 'बापूजी' घबराहटके साथ प्रवेश करता है।]

अजनी कौन, बापूजी ?

मीरा--बापूजी ! ठीक वक्तपर आये। हम कबके ढूंढ़ रही है, परन्तु नहीं मिल रही है। जरा ढूंढ़ तो दो।

बापूजी क्या ?

मीरा अजी, कैंची चाहिअे, कैंची ?

बापूजी--किसलिये ?

मीरा कागजके अक्षर काटने है। हम बीड़ीके कारखानेमें काम करनेवाली मजदूर स्त्रियोंका जुलूस निकालनेवाली हैं, जो कि हड़ताल कर रही हैं। लाल कपड़ेपर, 'पूंजीशाही नष्ट करो' अिस तरहके अक्षर काट कर लगाने हैं। कैंची पिताजीके टेबलपर रहती है; मगर सब ढूंढ़ लिया। मिली नहीं। जरा बता दो न ?

अंजनी–और अक्षरोंको भी काट दो बापूजी ? आपके अक्षर बहुत सुन्दर हैं। पिताजी तो हमेशा प्रशंसा किया करते हैं कि...

बापूजी असम्भव। मैं नहीं दूंगा।

मीरा यह क्या कहते हो जी ? लाल कपड़ा देकर जैसे आपने हमारी अिच्छा पूरी की वैसे ही....

बापूजी मैंने लाल कपड़ा दिया ? कब ? कहां ? किसे ?

मीरा आपको पता नहीं, परन्तु सच, आपने कपड़ा दिया है। अंजनी गवाह है।

[दोनों हसती हैं।]

बापूजी अरे, आप हंस क्यों रही है? कहो न मैंने कब दिय!

अंजनी अजी, सिर बांधनेका आपका लाल रुमाल है न, पुराना होने पर भी आप अुसको पेन्शन देनेके लिये राजी नहीं थे हमने अुसे ही फाड़कर झंडा बना लिया।

[दोनों फिर हंसती हैं।]

बापूजी गजब कर दिया आप लोगोंने। हर हर मेरा रुमाल?

मीरा—आप बुरा क्यों मानते हैं? रूमालका अुपयोग सत्कार्यमें होगा, जीर्ण तो हो गया था।

अंजनी अिसीलिये तो कहती हूं कि कागजके अक्षर काटकर डबल पुण्यके हिस्सेदार बन जाओ।

मीरा देखो अच्छे अक्षर होने चाहिये।

बापूजी अरे, मैंने कबूल कहा किया, जो तुम मुझ यों करो और त्यों करो कह रही हो।

अंजनी वाह आपको मंजूर करना ही होगा।

(दोनों अुसे पकड़ती हैं। वह विनीत भावसे कहता है....)

आप लोगोंने क्या यह तय किया है कि मुझे नौकरीसे निकलवा दिया जाय? वकील साहब ख़फा होंगे न?

मीरा पिताजीको मालूम ही कैसे होगा !

अंजनी अनको बम्बअीसे आनेमें अभी चार रोज चाहिअे।

बापूजी वे तो सुबह ही लौट आये।

मीरा- क्या कहते हो ? वे आगये ?

अंजनी पिताजी आगये ?

बापूजी यही तो कह रहा हूं। अभी 'शेव' किया और स्नान कर आ ही रहे होंगे। आपके पैरों पड़ता हूँ, आप यहासे जाअिअे। वे खफा होंगे।

मीरा-अंजनी क्यों ?

बापूजी अुनको जो बीड़ी खास पसन्द है वह खत्म हो गअी। रामा को भेजा है। मिल गअी तो नसीब।

(रामा आता है और घबराकर कहता है........बापूजी।)

बापूजी अरे, चिल्लाते क्यों हो ? क्या खबर है ?

रामा बड़ी बुरी खबर ? तमाम औरतें हड़ताल पर हैं। मालिकोंने सोचा था कि चार दिनके बाद झक मारकर लौटेंगी। लकिन यह भ्रम ही रहा। मालिकोंने चालाकीसे फूट डालनेकी कोशिश की थी, परन्तु यहापर अुनकी हार हुअी। कल अुनके जुलूसपर गुण्डो द्वारा पत्थर फेंके गये। आज भी शायद जुलूस निकलनेवाला है। क्यों है न मजेदार खबर ?

बापूजी अरे बेवकूफ ! तुझे खबरके लिये भेजा था या बीड़ीके लिये ? तो लाया है न ?

रामा थोड़ी-बहुत, बीडीका जला हुआ टुकड़ा भी मिल जाय तो सौगध ले लो। तमाम दूकानें........

बापूजी निकाल यहांसे। (वह जाता है) तो अब क्या करें? जान की खैर नहीं। वकील साहब तो गजब ढा देंगे। (मीरा व अंजनी हंसती है।) और आप दोनों अिस हड़तालकी अगुआ! पैरों पड़ता हूं अभी यहांसे जाअिअे।

मीरा कैंची तो दो।

बापूजी यह क्या टेबुल पर है? बगलमे बच्चा और गांवमें ढिंढोरा!

अंजनी अरे यह तो यहीं पड़ी है? अच्छा बापू 'थैंक्यू!'

[दोनों जाती है।]

बापूजी कैसी लड़कियां है! आंखोंके सामनेकी चीज दीखती नहीं और चली हैं लीडरी करने!

[रायबहादुर आते हैं। टेबुलके सामने कुर्सीपर बैठकर कागजात देखते हैं। डिब्बेसे अेक बीड़ी निकालकर मुहमें लेते हैं और सुलगाते हैं। कुछ अरुचिकर मालूम होती है। अुसे फेककर दूसरी लेते हैं और बात-चीत करते हैं....]

'क्यों जी, आज कितने मुकद्में हैं?

'चार।'

'किनके?'

'पहला नंबर .... ३८६।'

'नाम?'

'वे अपने नरसाप्पा! बीड़ी-कारखानेके मालिक।'

" किसपर ?'

" अुन्हींके कारखानेकी अेक मजदूर स्त्री अेवूने अुन्हींपर फरियाद की है मारपीटकी वजहसे। आप मुद्दालेकी तरफ हैं।

' बेशक, क्यों नहीं ! हम सदा मालिकोंकी ओर ही रहते हैं। ये स्त्रिया भी बड़ी बदमाश होती हैं।'

' अच्छा, अिसके बाद दूसरी पेशी किसकी है ?.......अरे बापू, बीड़ी में मजा क्यों नहीं आ रहा है ?'

बापूजी—अ अ-स्र शायद सफरकी वजहसे रुचिमें फर्क पड़ा हो !

' गलत ! तुम यह क्या कह रहे हो ? हमेशावाली यह बीड़ी नहीं है।'

' जी नहीं। वही तो है।'

" कतअी नहीं, दूसरा बण्डल निकालो।'

' खत्म हो गया।'

' तो रामाको लानेको भेजो। और देखना, अेक हजार ज्यादह मंगाना। बम्बअीके हमारे लाला साहबको यह बहुत पसन्द आअी। अुनके यहाँ भेजना है। जाओ, देरी न करो।'

' भेजता हूँ...लेकिन....लेकिन....

" लेकिन-वेकिन क्या करते हो ! मुझे अिसी वक्त चाहिअे।'

' ठीक। लेकिन आपकी खास बीड़ी आअे तब तक यह सिगरेट ही देखिअे। कल ही पम्पू शाहकी ओरसे भेंट आअी है। बहुत बढ़िया है।'

'फेंको अुसे चूल्हेमें। तम्बाकू पीनका असली मजा है बीड़ीमें। अिसके सामने सिगरेटकी क्या हस्ती। भेंट भेजनेवाला पम्पू शाह अेक अुल्लू तो तुम सात अुल्लू, जो मेरे सामने अुसे रखते हो! चलो, मंगाओ जल्दी यही बीड़ी।'

'अगर आप वही चाहते हैं तो....'

'हां, वही चाहता हूं!'

'तो अिन्तजार करना होगा?'

'कितनी देर? पांच मिनट?'

'शायद पांच दिन भी लग जायं?'

'क्या बकते हो। बाजारसे खरीदनेमे पांच दिन लगते हैं। अिसका क्या अर्थ?'

'जी, अर्थ नहीं अनर्थ हो गया है।'

'यानी?'

'हड़ताल।'

'कहा? किसकी? बीड़ियोंकी?'

'बीड़ी बनानेवाली मजदूर स्त्रियोंकी?'

'अिसके क्या मानी?'

'कारखाने बन्द पड़ गअे। स्त्रियोंने हड़ताल कर दी। पुराना स्टाक भी खतम हो गया।'

'तो फिर प्रयल-काल आनेमें बाकी ही क्या रहा? प्रतिष्ठित व्यक्तिकी अैसी बेअिज्जती। यह कैसी हड़ताल? अेक-अेक मजदूर स्त्रीको मार-पीट कर, खींच कर क्यों नहीं लाया जाता है।'

'दस पाच स्त्रियां नहीं हैं। पूरी डेढ़ हजार।'

'तो कम हैं। आ....आखिर अबला ही हैं न? औरतें हड़ताल करती हैं और मर्द चूड़िया पहन कर घरमें हैं। वे आगे क्यों नहीं बढते?'

[रामा आकर कहता है....बीड़ी कारखाने वाले नरसाप्पा सेठ आये हैं।]

[नरसाप्पा सेठका प्रवेश]

रायबहादुर आिअये, आिअये। अच्छे आये, आपकी याद कर रहा था। अरे यह क्या! बूढेके समान लकड़ी टेककर आप कबसे चलने लगे?

नरसाप्पा क्या कहूं अब? अिन हड़तालियोने तो परेशान कर दिया। जहां रोज सौ दो सौ रुपयेकी आमद, वहा छः कौड़ी भी मिलना मुश्किल हो गया। सब कच्चा माल पड़ा है। सात-आठ सौ का लुटा गया।

'आप घबराते क्यों हैं? गंवार औरतोंके हड़ताल करनेसे आप अितना डर गअे?

'नीति-शास्त्रके चारों अस्त्र अिस्तेमाल कर लिये। सचमुच मैं हार गया। अिनकी मागें पूरी किअे बिना....'

'अुनकी मांगें क्या हैं?'

'पूछिअे ही नहीं। बस लूटने और बदला लेने पर ही आमादा हो गअी हैं। कहती हैं कि अेक हजार बीड़ीकी सात आने मजदूरी मिलनी चाहिअे।'

'अभी आप क्या देते हैं ?'

'पांच आने ।'

'बहुत ज्यादह है। हरेक भारतीयका रोजाना भोजन-खर्च छः पैसेसे ज्यादह नहीं होना चाहिअे। अर्थशास्त्र यही कहता है।'

'लेकिन ये तो दिनों-दिन बदमाश होती जा रही हैं। कहती हैं कि बैठनेके लिअे जो मालिककी जगह है असका चार आने किराया भी न देंगी।'

'बैठनेके लिअे गद्दी तकिया नहीं मांगा अुन्होंने ?'

'साहब! आप ही गौर कीजिअे। और कहती हैं कि मजदूर स्त्रीकी जचकीमें अुसे घर बैठे भत्ता देना होगा। किसका कर्म और कौन प्रायश्चित्त करे!'

'निर्लज्ज हो गअी हैं। और भी कुछ बकती हैं ?'

'हां, कहती हैं कि धर्मादा अब न काटा जाय। अिस धर्मादा पर तो हम यात्रा करते हैं; अिसीलिये कि अुनके हाथों धर्म नहीं होगा। हम ही अुनके खातिर धर्म करके पुण्य-दान करेंगे ?'

'अरे, तो आपने अिन्हें अिस हद तक बढ़ने कैसे दिया ?'

हमने नहीं बढ़ने दिया। रोकनेमें सारी ताक़त लगा दी। परन्तु सूत्रधार तो दूसरे ही लोग हैं।'

'वे कौन ?'

'दूरके लोग नहीं। अब संकोच क्यो करूं। आपहीके घरमें नेतागिरी करनेवाले हैं।'

'मेरे घरमें! कौन रामा या बापू क्लर्क, अच्छा, तभी तो मुझे शक हुआ था। क्यों रे बदमाश बापू ?'

बापूजी (हाथ जोडकर) नहीं-नहीं सरकार। गरीबपर अन्याय हो रहा है।

नरसाप्पा अजी नहीं, ये दोनों नहीं, बल्कि आपकी दोनों सुपुत्रियां!

रायबहादुर—(क्रोध और आश्चर्यसे) असंभव्! आप यह क्या कह रहे है?

नरसाप्पा गये हफ्तेमें आप नहीं थे, नहीं तो देखते कि हड़ताली मजदूर औरतोंका जुलूस जोरसे नार लगाता है कि 'पूंजीशाही नष्ट करो' और अगुआ हैं आपकी अंजनी और मीरा।

रायबहादुर गलत गलत। असम्भव!

नरसाप्पा खाक असम्भव और गलत! दस बरस पहले जिनकी यह हालत थी कि दस घण्टे मर मर कर काम करतीं और मार-पीट पर भी चूं तक नहीं करती थीं, वे ही अब पिशाचवत् घूमती हैं, बकती हैं। यह कैसे संभव हुआ?

[रायसाहब खोखले आते हैं।]

खोखले- आग लग गयी, रायबहादूर! आग लग गयी। आपका आना सुनते ही दौड़ आया। आप कैसे चुप हैं?

राव क्या कहते हो? कैसे मेरे घरमें आग लगी? कहां? दूसरी मंजिल पर या तीसरी? बापू! बापू! मूर्ख, देखता क्या है? फायर ब्रिगेडको फोन करो। नहीं तो तू खुद दौड़ जा। रामाको उठा। रामा, अरे दौडके।

खोखले अजी, यानी समगुचकी नहीं।

राव　अरे तो मुझे क्यों घबरा दिया ? (बापूको बुलाते हैं) अरे मत जाओ ।

खोखले　मैं क्या कहता हू, यह आप ठीकसे सुनिये । आप रायबहादुर, मै रायसाहब, और दो चार सहयोगी लोग हैं । हम ही तो अिस नगरकी आबरू हैं । नौकरशाहीकी शान्ति और सुव्यवस्था रखना हमारा फर्ज ही है । कानूनके आधार-स्तंभ !

नरसाप्पा　बिल्कुल पत्थरके खंभे कहिये न !

खोखले　सवा सोलह आना ठीक बात कही । हां, तो रायबहादुर ! आपकी लड़कियां अिसप्रकार रायबहादुरीका राज-मार्ग छोड़कर अिस बवंडर काममें शामिल होने लगीं, तो आगसे भी बढ़कर नहीं हुआ !

रांव　अिससे तो सचमुचकी आग भली ।

खोखले—मैं भी तो यही कहता हूँ कि कमसे कम घरकी ही आग बुझा दे तो अहोभाग्य ।

नरसाप्पा　मैंने अिनसे अभी कहा कि देखो, आपकी दोनो लड़किया झंडा लेकर जुलूस....

राव—हर हर ! अब नहीं सुना जाता । अगर कहींसे बातें कलेक्टर साहबके कानो तक पहुंच...

खोखले　अब तक तो गअी भी होंगी ।

नरसाप्पा—कमिश्नर साहबको अगर जरा भी शक हुआ तो....

खोखले　तो कभी भूले-भटके आपको आनेवाला आमन्त्रण भी बन्द हो जाअेगा !

राव हाय ! अब क्या होगा ! मीरा ! अरी मीरा !

मीरा- (भीतरसे) हा पिताजी ?

राव पहले बाहर आओ ।

मीरा (कमरेमें से ही) क्या काम है पिताजी ! क्या आपको कैंची चाहिअे !

राव——कैसी कैंची ? मेरे गलेमें यहां फांसी लग रही है और तुम....चल, पहले बाहर आ ।

[मीरा 'आती हू' कहते हुअे प्रवेश करती है...]

पिताजी ! क्या हुआ ?

राव——पूछ क्या रही हो ! ये रायसाहब और नरसाप्पाजी क्या कह रहे हैं !

मीरा——मैं तो कमरेमें थी, ये क्या कह रहे थे, यह कैसे सुन सकती थी ! और ये हैं कौन ?

राव——अरे, ये अपने रायसाहब खोखले । पूरे दस वर्षतक अेक म्युनिस्पैलिटीके प्रेसिडेन्ट थे । बैंकके अुपाध्यक्ष, मिलके डाअिरेक्टर । और ये नरसाप्पाजी, ४–५ लाख के मालिक, बड़े कारखानेदार ! दानशूर !

मीरा मै अिनको अच्छी तरह पहचानती हूं । लेकिन पिताजी आप जरा गलती पर हैं । ये दस साल तक प्रेसिडेन्ट जरूर रहे होगे, मगर अब लोकशाहीके और कॉंग्रेसके युगमें अिनकी दाल नहीं गलेगी । अब अिन्हें कोअी नहीं पूछता । नौकरशाहीके पिट्ठू बनकर भले ही निभ जायं ।

राव मीरा ! मीरा । यह क्या बक रही हो ?

मीरा--[पिताकी ओर ध्यान न देते हुअे] और ये नरसाप्पा अिन्होंने लाखों रुपया कहांसे पैदा किया? क्या खुदका पसीना बहाया? ये दान भी करेंगे तो गरीबों की आंख में धूल झोंकने के लिये। मजदूर स्त्रियों को पीसकर, दलकर ये बड़े हुअे हैं। इस कमरे से भी वह जगह छोटी है, जहां टीन की छत है। गर्मी में काम करनेवाली स्त्रियों से पूछिअे कि क्या हालत होती है वहां अुनकी और अुनके बच्चोंकी? पीनेके लिअे पानी नहीं। फिर भी चार आना किराया! अपराध न होने पर भी मजदूरी में पचास प्रतिको छाट? मजदूरी कितनी? पाच आने! वे भी पूरे नहीं। किसी न किसी बहाने से अुसमें भी लूट-खसोट। रोते हुअे बच्चे घरमें फेंक कर दस घंटे काम करने वाली स्त्रियां! कभी दया भी आअी थी आपको नरसाप्पाजी?

नरसाप्पा--अरे बापरे! यह तो अुलटे मुझपर ही छींटेकशी करने लगी?

खोखले देखिये रायबहादुर साहब! मैं कह रहा था न कि आग लग गअी है!

राव मीरा! मीरा! क्या तू मेरी लड़की है? अितनी बागी कब से बनी? दोनो बहनें अध्ययनमें व्यस्त हैं, अैसा ही मैं समझ रहा था। मीरा! तुझे किसने अैसा बनाया?

मीरा--वक्त ने। अिस युगके नौजवानोंके दिलमें आग भड़कनेके लिये वक्तकी ताकत ही काफी है।

राव--खामोश। मैं भी देख लूंगा। मैं कालको पछाड़नेवाला, तुमको आगे बढ़ने दूंगा! भूल जाओ। गंवार, निरक्षर, मूर्ख स्त्रियोंके साथ रहकर घरको बदनाम कर दिया! चिनगारी! आवारा!

मीरा चिनगारी! चिनगारी! पिताजी! अेकबार फिर कहिये वह शब्द। आपने वह गाली दी, मगर मुझे वह वरदान है। मैं सचमुच चिनगारी ही बनना चाहती हूँ, जिससे दुनियाके पाप, अत्याचार, नृशंसता, पाशविकता सब भस्म कर दूं। मेरे अंतर्बाह्यमें अग्नि व्याप्त है; अिसलिअे मैं सचमुच में चिनगारी ही बनना चाहती हूँ। कोल्हूके बैलसे भी बदतर जिन स्त्रियोंकी....मजदूर स्त्रियोंकी हालत है, अुन पर कतअी ध्यान न देनेवाले समाजमें मैं आग लगाना चाहती हूँ। गरीबोंकी चमड़ेकी झोंपड़ीमें जो भूखकी, पीड़नकी, दर्दकी ज्वाला धधक रही है, अुससे मै समाजको जागृत करना चाहती हूँ। ये अिनके बड़े-बड़े महल और बंगले देखकर आप अिन पर फिदा हो रहे हैं। मगर अुनके भीतर देखिअे अपने खूनकी, अपने शरीरकी, अपने स्वत्वकी अींटें लगाकर बनाअी हुअी ये अट्टालिकाअें देखकर अिन गरीबोंकी क्या हालत होती होगी! जौंकके समान खून चूस चूस कर ये बड़े बने हैं। आज आठ दिनसे आठ हजार औरतें भूखी हैं। किसीने अुनकी सुध ली? आपके जवाहरात, आपके मकानात, आपके मीठे-मीठे पकवान वे नहीं चाहतीं। वे तो सिर्फ पूरी मजदूरी चाहतीं हैं, मजदूरी! जी तोड़ परिश्रमका मुआवजा दीजिअे। बस यही मांग है। पांच आनेमें वे गुजर नहीं कर सकतीं! कहिअे कुछ जवाब दीजिअे नरसाप्पाजी!

नरसाप्पा क्या जवाब दूँ! यह सब बकवास फिजूल है। सात नहीं नौ आने देने पर भी अुनकी जन्मजात आदतें नहीं जायेंगी और अुनके मर्द शराब-ताड़ीमें यह बढ़ती हुअी आमद बिना अुड़ाये नहीं छोड़ेंगे। ठीक है न, रायसाहब?

खोखले बिल्कुल सोलहो आने। क्या चुनकर और बेजोड़ दलील दी है। वाह! वाह! कल ही किसीने लेक्चरमें कहा कि पहले बुरी आदतें छोड़िअे; ज्योंही वे छूटीं कि दरिद्रताका नाश तो आपसे आप हो जायगा।

राव कितना सुन्दर अुपदेश है, मीरा! तुम हड़ताल आदिके फेरमें न पड़ो और अुपदेश देती रहो। अभी सब सुधर जाते हैं।

नरसाप्पा मैं भी तो यही कह रहा था। देखो, महात्माजी शराब-बन्दीका अुपदेश देते हैं।

मीरा——बस-बस, अुस विभूतिको क्यों बदनाम करते हो। अपने स्वार्थके लिये औरोंकी आड़में छुपना कायरोंका काम है। शैतानको गीताकी फिलासफीका ठीक ठीक ज्ञान है, यही अब कहना पड़ेगा। अपने मतलबके लिये शैतान अुसमेंकी भी मिसाल देनेमें पीछे नहीं रहेगा। पूँजीपतियों द्वारा किये जानेवाले अत्याचारोंकी ओर आपकी निगाह नहीं जाती! क्यो? आपका स्वार्थ है अिसलिअे न! कारणको जाने बगैर अुसीके दमनका विचार करनेके बजाय यह अुपदेश अच्छा है! क्यों? तो फिर आपकी भाभीका भण्डाफोड़ क्यों हुआ था——रोज रातको बोतलें-ही-बोतलें क्यों खुलती हैं? यह आपका अुपदेश गरीबोंके लिअे ही है? आप लोगोंकी रातें कहाँ कटती हैं? रायसाहबने....

राव मीरा! मीरा! जबान बंद कर। रायसाहबका अपमान करती है। वेश्या!

मीरा डेढ़ हजार घरोंका सत्यनाश करते वक्त कहाँ गयी थी यह दया पिताजी? यह कटु सत्य है, परन्तु आपको मानना होगा।

आखिर गरीब शराबी क्यों बनता है ? आप जैसोंके अत्याचारसे कुछ क्षण बचनेके लिये ! भूखसे त्राहि-त्राहि करनेवाली औरतों और बच्चोंके कष्टसे कुछ वक्त छुटकारा पानेके लिये ! नरसाप्पाजी, आप जैसोंकी पूंजीशाही ही अिसके मूलमें है । जिसे तहस-नहस किये बिना...

['पूंजीशाही नष्ट करो' कहते हुअे और अिन्हीं वाक्योंसे लिखी हुअी पताकाको लेकर अंजनी भीतरसे आती है ।]

राव अंजनी ! कौन, मेरी लड़की अंजनी है !

खोखल रायबहादुर, अब तो सचमुच आपके घरमें आग लगी है ।

नरसाप्पा मैं भी तो यही कह रहा था...

(अंजनी अुनकी ओर ध्यान न देते हुअे मीरासे कहती है)

मीरा ! कितनी सुन्दर बनी है पताका ।

मीरा वाह, तुमने तो कमाल कर दिया ।

[दोनों पताकापरके वाक्योंको जोरसे पढ़ती हैं । अुसी वक्त बाहर मैदानमें अिकट्ठी हुअी स्त्रियां ज़ोरसे कह अुठती हैं 'पूजीशाही नष्ट करो' 'काले कानूनको मिटा दो']

अंजनी मीरा, चलो । आरतें जमा हो गअीं शायद ।

मीरा चलो ।

राव मीरा । अंजनी ! ठहरो । कहा जा रही हो ।

मीरा सेवाके लिअे ।

राव खबरदार, अगर पैर भी बाहर रखा तो ! यह घर मेरा है । मेरा कानून अटूट है ।

अंजनी- काले कानूनको नष्ट करो ।

राव खामोश ! अभी रामाको कहकर दरवाजेमें ताला डलवा देता हूं । फिर देखता हूं तुम्हारी कितनी ताक़त....

[अितनेमें रामा अेक मजबूत आदमीसे लड़ते-झगड़ते हुअे भीतर आता है । वह आदमी भी भीतर आना चाहता है और रामाके प्रतिकारको ठुकरा देता है ।]

वह आदमी जाने दो, मुझे अन्दर जाने दो ।

रामा---अब तू कुछ समझता भी है ! मालिक बैठे हैं, और बेधडक आनेमें तुझे शरम भी नहीं आती !

राव---क्यों रामा ! क्या शोर है, कौन है रे तू ! शरारतके साथ क्यों पेश आता है ?

आदमी---शरारत न करूँ तो क्या करूँ ? मुझे यकीनन मालूम हुआ है कि अिसी घरमें मेरी पत्नी छिपी है ।

राव---अिस घरमें ! पागल तो नहीं हुआ है ?

आदमी---पागल ! नहीं । रायबहादुर ! सचमुच आपकी अिन दोनों लड़कियोंने ही अुसे यहां छिपा रखा है ।

राव---अरे तू कहता क्या है ? तू है कौन ? और यह क्या शरारत करता है ?

आदमी---मेरा नाम शरणप्पा है । मैं अगर गलत कह रहा हूं तो अपनी दोनों लड़कियोंसे पूछिये ।

राव—अब तो शायद मैं ही पागल हो रहा हूं। मीरा ! अंजनी ! यह क्या कारनामे कर रखे हैं ?

मीरा यह ठीक कहता है पिताजी। लेकिन यह पूरा बदमाश है। घबरानेकी कोअी बात नहीं। यह विभीषण है जो हड़तालियोंमें फूट डालता है। बंबअीके मजदूरोंने अिसे निकाल दिया है। यह अपनी औरतको अिसलिये मारता था कि वह भी हड़तालमें न जाय.... राव किसके घरमें ? क्या यह तेरे बापका घर है ?

अंजनी अिसमें क्या शक ?

मीरा क्यों रे अब क्यो लौट आया ! स्त्रीको घरसे निकाल दिया था न ! बेशर्म !

शरणप्पा अुस वक्त जरूरत नहीं थी। अब जरूरत है।

मीरा— क्या स्त्री पैरकी जूती है या आपके हुकुमकी गुलाम ! जरूरत है तब चाहिअे, नहीं तो चाहे वह मर क्यों न जाय ! निकल यहांसे।

शरणप्पा मेरी स्त्री अभी दे दो। मैं अभी जाता हूं। क्यो वकीलसाहब ?

राव मीरा ! अिसकी पत्नी कहां है ?

मीरा मेरे कमरेमें।

राव अुसको अभी अिसके साथ भेज दो।

मीरा कदापि नहीं।

राव क्यों ?

मीरा वह असमर्थ है। वह जच्चा है। पिताजी ! क्या नृशसतासे मारनेवाले अिस नराधमको आप यहांसे नहीं निकाल सकते ! मर्दों की भी यह पूंजीशाही मिटानी होगी।

बाहरसे आवाज़ [पूंजीशाही नष्ट करो !]

अंजनी मीरा ! मीरा चलो जल्द ।

मीरा ओहो ! काफी वक़्त हो गया । चलो ।

राव मीरा ! पीछे लौटो, अगर गअी...

मीरा अंजनी...हम तो जायेंगी ही ।

राव अच्छा खबरदार ! अगर तुम दोनो लौटकर मेरे घरमें आअीं तो ।

मीरा—पिताजी ! यह आपका ही घर नहीं है । अिस पर हमारा भी हक़ है । औरतोंको और बच्चोंको गुलाम समझनेका वक्त गया । शरणप्पा जिस तरह पतित्वका अधिकार जताकर अपनी स्त्री को नहीं ले जा सकता, अुसी तरह आप भी हमें घरसे नहीं निकाल सकते ! हुकूमतके दिन बीत गये । अंजनी चलो ।

राव०—(अफसोस के साथ) अुफ मेरे घरमें और यह वाकया ! मैं ख़्वाब तो नहीं देख रहा हूं ! हाय ! मीराने जाते वक़्त क्या कहा....हुकूमतके दिन बीत गये !

नरसाप्पा हम भी हार गये ! रायबहादुर !

खोखले—अिसीलिअे तो कहता हू कि आपके घरमें ही नहीं, सारे पूंजीपतियोंके घरमें अिस चिनगारीने आग सुलगा दी है ।

तीनो अेक दूसरेकी ओर देख कर सर पीट लेते हैं । बाहरसे मीरा-अंजनीकी आवाज आती है—नहीं रखनी, सरकार जालिम नहीं रखनी ! हड़तालियो द्वारा प्रत्युत्तर मिलता है पूंजीशाही नष्ट करो ! काले कानूनको मिटा दो । [परदा गिरता है]

समुद्रगुप्त पराक्रमांक

(अेक अैतिहासिक अेकांकी नाटक)

रामकुमार वर्मा

स्थान	पाटलिपुत्र
काल	४२० विक्रम

पात्र

समुद्रगुप्त पराक्रमांक	पाटलिपुत्रके सम्राट्
धवलकीर्ति	सिंहलके राजदूत
मणिभद्र	भाण्डागारके अधिकरण
कोदंड	महाबलाध्यक्ष
घटोत्कच, वीरबाहु	भगवान् बुद्धकी प्रतिमा निर्माण करनेवाले शिल्पी
प्रियदर्शिका	सम्राट् समुद्रगुप्तकी वीणावाहिनी
रत्नप्रभा	राजनर्तकी
प्रहरी	

[भाण्डागारका बाहरी वक्ष । दीवालों पर अनेक नृत्य-मुद्राओंमें नर्तकियोंके चित्र हैं । स्फटिक पत्थरोंके स्तभों पर दीपोंका आलोक हो रहा है । पीछे लोह-दण्डोंसे बना हुआ परिवेषण है ।

मंचके बीचमें समुद्रगुप्त खड़े हुअे हैं । शरीर पर श्वेत और पीत परिधान । रत्नजटित शिरोभूषण, केश अुन्मुक्त । पुष्ट वक्षस्थल, जिस पर रत्नोंके हार । कटिबन्धमें खड्ग । अुनकी मुद्रा गंभीर है ।

अुनके दाहिनी ओर सिंहलके राजदूत धवलकीर्ति और राज्यके महाबलाध्यक्ष कोदंड हैं और बाअीं ओर भांडागारके अधिकरण मणिभद्र हैं। धवलकीर्तिका पीत, मणिभद्रका श्वेत और कोदंडका नील परिधान है। कोदंड सैनिक-वेशमें है। द्वार पर शस्त्र लिअे प्रहरी। समुद्रगुप्त धवलकीर्तिको संबोधन करते हुअे कहते है।]

स० तो अब यह निश्चय है कि भांडागारमें वे रत्न नहीं हैं!

ध०—यह तो आपने स्वयं देखा, सम्राट ! किन्तु भांडागारसे अिस तरह चोरी हो जाना आश्चर्यजनक है! भांडागारके अधिकरण मणिभद्र स्वयं कुछ नहीं कह सकते।

स० [तीव्र स्वरसे] क्यो नहीं कह सकते? [मणिभद्रसे] मणिभद्र, वे रत्न कैसे चोरी चले गअे? आज तुम्हारा वह विश्वास कहाँ है जिसमें दो युगोंसे पाटलिपुत्रकी मर्यादा पोषित होती आ रही थी? वह विश्वास कहाँ है जिसमे मैंने तुम्हे कांची और देवराष्ट्रकी सम्पत्ति सौंपी थी? वह विश्वास कहाँ है जिसमें लिच्छवि-वंशका गौरव निवास करता रहा है? क्या अुस विश्वासमें विष प्रवेश कर गया? बड़ी से बड़ी संपत्तिकी रक्षा करनेका अनुभव लेकर भी तुम दो हीरक-खंडोकी रक्षा नहीं कर सके? तुमने मेरे विश्वासमें अिन रत्नोंकी केवल दो चिनगारियोंसे आग लगा दी! तुम्हारे ये श्रम-बिन्दु यदि रक्त-बिन्दु बन जाते....! [क्रूर दृष्टि]

म० सम्राट्, अच्छा होता यदि मेरे प्रत्येक रोमसे रक्त-बिन्दु निकलकर आपके चरणों पर गिरकर कह सकते कि मैं

निर्दोष हूँ। यदि रक्त-बिन्दु वाणीरहित हैं तो आप उन्हें दूसरी भाषा दीजिअे; किन्तु आपके विश्वासकी पवित्रता खोकर मैं जीवनकी रक्षा नहीं चाहता।

ध०——सम्राट्, आपका विश्वास खोकर कौन अपने जीवन-की रक्षा करना चाहेगा? किन्तु मणिभद्रकी संरक्षासे रत्नोंका चोरी जाना आश्चर्यजनक है!

म०——यह आश्चर्य ही मेरे लिये मृत्यु-पीडाका दशन है। सम्राट्ने जिस विश्वाससे मुझे अश्वमेध यज्ञकी संचित निधि सौंपी थी, उसी विश्वासकी पवित्रतासे मैंने उन रत्नोंकी सरक्षा की थी। फिर भी प्रातःकाल वे राज्य-भांडागार में नहीं पाये गये।

स०——भांडागारके अेक-मात्र अधिकारी तुम्हीं हो मणिभद्र। फिर तुम्हारी आज्ञाके विना यहाँ कोअी प्रवेश ही कैसे कर सकता है?

ध०——यही तो आश्चर्य है, सम्राट्!

स०——आश्चर्यसे अपराध नहीं छिपाया जा सकता, धवल-कीर्ति! अपराध की सहस्र जिह्वाअें हैं जो अग्निशिखाकी भाँति चंचल हो सकती हैं और [मणिभद्रसे] तुम यह जानते हो मणिभद्र कि भांडागार की रक्षा क्या है! वह कृपाणके दर्पणमें बंद की हुअी छाया है, कृपाणसे मुक्त नहीं की जा सकती।

म० सम्राट्, मैं अपनी मृत्यु हाथमें लेकर आया हूँ। रत्नोंका खो जाना ही मेरे लिये सबसे बड़ा अपराध है। मुझे केवल अपने भाग्य-दोषका दुःख है! यश और कीर्तिके साथ सम्राट् की सेवा पचीस वर्षों तक करनेके अनतर अिस भाँति

अपयशसे मेरे जीवनका अंत हो ! मैं आपसे अपनी मृत्यु माँगने आया हूँ, सम्राट् !

स० मुझसे अपनी मृत्यु माँगनेकी भी आवश्यकता है ?

म०—सत्य है, सम्राट्, मैं अभी तक अपने जीवनकी समाप्ति कर चुका होता किन्तु आपके समक्ष अपनी आत्माकी पवित्रताके दो शब्द कहे बिना मुझे परितोष न होता। आप मेरे चरित्रके सम्बन्धमें अनेक बातें सोच सकते थे। अब मुझे संतोष है, मैंने अपनी आत्माकी पुकार आप तक पहुँचा दी। अब मुझे आज्ञा दीजिअे।

स०—मणिभद्र, अभी तुम नहीं जा सकोगे। तुम्हारे अुत्तरदायित्वके साथ राज्यका भी अुत्तरदायित्व है। यदि तुम्हारे अधिकारमें सुरक्षित की गअी अश्वमेध यज्ञकी सारी सपत्ति भी नष्ट हो जाती तो मुझे अितना दुःख न होता जितना अिन दो रत्न-खंडों की चोरीसे हुआ है। अिन रत्नोंके साथ जैसे मेरे हृदयकी सारी शांति और पवित्रता भी खो गअी है।

ध०—सम्राट्, अुन रत्नोंका सम्बन्ध भी पवित्रतासे ही था॥ वे सिंहल की राजमहिषीके कंठहारके प्रधान रत्न थे जो भगवान् बुद्धकी प्रतिमाके लिये विश्वाससे आपकी सेवामें भेजे गअे थे॥

स० [आश्चर्य से] राजमहिषी के कंठहार से !

म०—हाँ, सम्राट्, मै ही राजदूत बनकर सिंहलसे यह संपत्ति लाया हूँ। जब सिंहलके महासामन्त सिरिमेघवन्न ने अेक लक्ष स्वर्णमुद्राअें बोधगया में अेक विशाल मठ बनवाने और भगवान्

बुद्धकी रत्नजटित स्वर्ण-प्रतिमा निर्माण कराने के निमित्त स्वर्णपात्रों में सुसज्जित की तब राजमहिषी कुमारिला के नेत्रों में श्रद्धा और प्रेम के आँसू छलक आये। उन्होंने उसी समय महासामन्त से प्रार्थना की कि उनके कण्ठहारके दो प्रधान हीरक-खण्ड श्रीमान्की सेवामें इस अनुरोधके साथ भेज दिये जायँ कि ये हीरक-खण्ड भगवान् बुद्धकी प्रतिमाके अंगुष्ठ नखोंके स्थानपर विजड़ित हों। सम्राट्, ये दोनों हीरक जैसे राजमहिषी कुमारिलाकी श्रद्धा और प्रेमके दो पवित्र अश्रु-बिन्दु थे जो आज खो गये! इन अश्रु-बिन्दुओंके खो जानेसे भगवान्के चरणोंपर राजमहिषीकी श्रद्धांजलि न चढ़ सकेगी। प्रतिमा अपूर्ण रहेगी, सम्राट्!

स० [आवेग से] तब सुनो, धवलकीर्ति, तुम सिंहलके राजदूत हो। मेरे महासामन्तकी भेंट लानेवाले। तुम्हारे सामने मैं यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि सम्राट् समुद्रगुप्त यदि उन रत्न—खण्डोंको नहीं खोज सका तो वह अपने राज्याधिकारका ध्यान छोड़कर भगवान् बुद्धकी प्रतिमाके सामने कठोर प्रायश्चित्त करेगा!

म० सम्राट्........

स० सम्राट्........

स० रुको राजदूत, यह प्रतिज्ञा समस्त साम्राज्यके भाग्य-निर्णयके साथ घोषितकी जा रही है। यह बुद्धके प्रति मेरे अपराधका दण्ड है! राजमहिषी के विश्वासकी रक्षा न कर सकने-वालेका प्रायश्चित्त है! मेरी घोषणा प्रचारित हो और इसके साथ मेरे भांडागारके अधिकरणका कलंक भी अमर हो। [मणिभद्र की

ओर दृष्टि] वह किस रूपमें हो, अिसका निर्णय अभी होगा।

म०—सम्राट्, आपके अिन शब्दोंमें मेरी मृत्यु भी मेरा अुपहास कर रही है! जीवनका अेक अेक क्षण मुझे शूलकी भाँति चुभ रहा है। मैं आपकी सेवासे जानेकी आज्ञा चाहता हूँ जिससे मैं अपने अिस कलंकित जीवनको अधिक कलंकित न कर सकूँ!

स० ठहरो मणिभद्र, मेरी प्रतिज्ञाकी पूर्तिमें तुम्हारी सहायता अपेक्षित होगी। तुम्हारी आत्म-हत्यासे मेरा कलंक मिटेगा नहीं। मुझे कुछ बातोंके जाननेकी आवश्यकता है।

ध०· सम्राट्, यदि अेकांतकी अवश्यकता हो तो मुझे आज्ञा दीजिये।

स०—नहीं धवलकीर्ति, ठहरो, तुम्हारे ही संरक्षणमें यह मठ और प्रतिमा निर्मित हुअी है, तुम्हारी अुपस्थिति भी आवश्यक है। मुझे विश्वास है, तुम अपने संकेतोंसे मेरे प्रयत्नमें सहायता पहुंचाओगे। [मणिभद्रसे] विश्वासपात्र मणिभद्र, वे रत्न-खंड सर्वप्रथम तुम्हारे अधिकार में कब आये?

म०—सम्राट्, आज से दस दिन पूर्व।

स०—फिर तुमने अुन्हें कहाँ सुरक्षित किया?

म० अिसी कक्षमें, सम्राट्!

स०—अंतरंग प्रकोष्ठ में क्यों नहीं?

म० मुझे धवलकीर्तिसे यह सूचना मिली थी कि मठ और प्रतिमाका कार्य संपूर्ण हो गया है और अब वे शीघ्र ही शिल्पियोंको दे दिये जावेंगे, अतः अुन्हें अतंरंग प्रकोष्ठ में रखने की आवश्यकता नहीं है।

ध०——महासामन्तसे मुझे यही आज्ञा मिली थी कि मैं शीघ्रतिशीघ्र मठ और प्रतिमाके निर्माण और अुनकी व्यवस्थाकी चेष्टा करूँ। सिंहल द्वीपके भिक्षुओंको बोधगयामें बड़ा कष्ट होता है, अिसलिअे अुनकी सुविधाके लिअे शीघ्रातिशीघ्र मठका निर्माण होना था। सम्राट्, आपकी प्रशंसा नहीं की जा सकती। आपने ब्राम्हण धर्ममें विश्वास रखते हुअे भी बोधगयामें भिक्षुओंके लिअे मठ बनवानेकी आज्ञा दे दी।

स० यह मेरी प्रशंसाका अवसर नहीं है, धवलकीर्ति! तो मठ और प्रतिमाकी शीघ्र व्यवस्था करनेकी प्रेरणासे ही तुमने मणिभद्रको अतरंग प्रकोष्ठमें रत्न रखनेसे रोक दिया?

ध०——हाँ, सम्राट्,शिल्पी प्रतिमा-निर्माण का कार्य समाप्त कर चुके थे। दो अेक दिनमें ही भगवान्के चरणोंमें वे रत्न विजड़ित कर दिये जाते।

स०——दो अेक दिनका प्रश्न नहीं था। प्रश्न मणिभद्रके अुत्तरदायित्व और कोष-संरक्षाका था। फिर वे रत्न शिल्पियोंको दूसरे दिन दे दिये गये?

म० नहीं सम्राट्, वे रत्न शिल्पियोंको नहीं दिये जा सके। शिल्पियोंको केवल पूर्व निश्चयके अनुसार चार सहस्र स्वर्णमुद्राअें दी गअी थीं।

स० क्यों?

म० अुनका पारिश्रमिक चार सहस्र मुद्राअें निश्चित किया गया था।

स० तो कार्य-समाप्तिके पूर्व ही अुन्हें पारिश्रमिक क्यों दिया गया ?

म० धवलकीर्तिका आदेश था।

स० [धवलकीर्तिसे] क्यों धवलकीर्ति, तुम्हारा यह निर्देश सत्य है ?

ध० सत्य है सम्राट्, मैं अुन शिल्पियोंके कार्यसे बहुत प्रसन्न था। वे अत्यन्त सात्विक प्रवृत्तिवाले हैं, मुझे विश्वास था कि वे पुरस्कार पानेके अुपरान्त भी रत्न जड़नेका कार्य पूर्ण करेंगे।

स० अैसे कितने शिल्पी हैं ?

ध० केवल दो हैं, सम्राट्!

स० अुनके नाम ?

ध० घटोत्कच और वीरबाहु।

स० अिस समय वे कहाँ हैं ?

ध० वे अपने आवासस्थान पर ही होंगे।

को० नहीं सम्राट्, वे अिस समय बंधनमें हैं। जबसे रत्नोंकी चोरीका समाचार प्रसिद्ध हुआ है तब से मैंने अुन शिल्पियोंको बन्दी कर रक्खा है। मैं अुन्हें मणिभद्रके साथ ही ले आया था। वे बाहर हैं। यदि आज्ञा हो तो अुन्हें सम्राट् की सेवामें अुपस्थित करूँ।

स० मैं तुम्हारी सतर्कतासे प्रसन्न हूँ महाबलाध्यक्ष, यद्यपि मैं जानता हूँ कि शिल्पी निर्दोष हैं फिर भी मैं अुनसे विचार-विनिमय करना चाहूँगा। अुन्हें मेरे समक्ष शीघ्र ही अुपस्थित करो।

ब० [सिर झुकाकर] जो आज्ञा। [प्रस्थान]

स०- तो धवलकीर्ति, तुम शिल्पियोंके कार्यसे बहुत प्रसन्न हो ?

ध० हाँ, सम्राट्, अुन्होने केवल अेक मासमें भगवान्की प्रतिमाका निर्माण कर दिया।

स० अुनके निर्माण-कार्यकी कुछ विशेषता ?

ध०—सम्राट्, भगवानकी प्रतिमा अितनी सजीव ज्ञात होती है मानो वे संघको अुपदेश देनेके अनन्तर अभी ही मौन हुअे हैं अुनकी प्रतिमाका ओज अन्य धर्मावलम्बियोको भी बौद्ध-धर्मकी ओर आकर्षित करनेमें समर्थ है।

स०—और बोधगयाका मठ पूर्ण हो गया ?

ध०—हॉ सम्राट्, मठ भी पूर्ण हो गया। अेक सहस्र भिक्षुओंके निवासके योग्य अुसमें प्रबन्ध है और अुसमें कला-कुशलता चरम सीमाकी अुपस्थित की गई है।

स० कला-कुशलताकी चरम सीमासे क्या तात्पर्य है ?

ध० सम्राट्, बुद्धदेवके जीवनके समस्त चित्र दीवालोंपर अंकित हैं। महामायाका स्वप्न, गौतमका जन्म, शाक्य नरेशका सुखोत्सव, वैराग्य उत्पन्न करानेवाले रोग, जरा और मृत्युके चित्र, कुमार गौतमका महाभिनिष्क्रमण, फिर अुनकी तपस्या अेव बुद्धत्व-प्राप्ति ! संघको अुपदेश देते हुअे अुनके चित्रोंमें महान् अैश्वर्य और विभूति है।

स० और भिक्षुओंकी सुविधाका क्या प्रबन्ध है ?

ध० सम्राट्, प्रव्रज्याकी समस्त सामग्री प्रत्येक कक्षमें संचित है। चीवर आदिकी व्यवस्था देशके अन्य मठोंसे अिसमें विशेष रहेगी। संक्षेपमें अब किसी भी भिक्षुको लौकिक अेव पारलौकिक दृष्टिसे किसी प्रकारकी भी असुविधा नहीं हो सकती।

स० तब तो मठसे समस्त शिल्पियोंको राज्यकी ओरसे भी पुरस्कार प्रदान किया जावेगा, घटोत्कच और वीरबाहुको तो विशेष रूपसे। धवलकीर्ति, पाटलिपुत्रमें अिन दोनों शिल्पियोंको आवास कहाँ दिया गया था?

ध० जिस आतिथिशालामें मैं हूँ अुसीके समीप राज्यकुटीरमें।

स० तुमने रत्नखडोंके सम्बन्धमे अुनसे कभी चर्चाकी थी?

ध० भगवान बुद्धकी प्रतिमाके समाप्त होनेके कुछ पहले ही मैंने भगवानके चरण-अंगुष्ठमें स्थान छोड़नेकी आज्ञा देते समय अुनसे अुन रत्नोंकी चर्चा की थी किन्तु अुनसे अधिक वार्तालाप कर अपना समय नष्ट करना मैंने कभी अुचित नहीं समझा। आवश्यक आदेशोंके अतिरिक्त मैंने अुनसे कभी कोअी बात ही नहीं की।

स० तुम सिंहलके प्रमुख कलाविद् हो। फिर कलाकारोंसे वार्तालाप करना समय नष्ट करना नहीं है, धवलकीर्ति!

ध० सम्राट्, आप जैसे अुत्कृष्ट कलाकारसे वार्तालाप करना सौभाग्य की बात है किन्तु सभी कलाकार मेरे समयके अधिकारी नहीं हैं।

स० तुम भूल करते हो धवलकीर्ति, प्रत्येक कलाकारमें कुछ न कुछ मौलिकता अवश्य होती है। कलाविद्को चाहिअे कि

कलाकारकी अुस मौलिकता को वह रत्नोंकी भाँति संग्रह करे।

[महाबलाध्यक्ष कोदंड का प्रवेश]

को० [प्रणाम कर] सम्राट्, दोनों शिल्पी यहां अुपस्थित हैं। आज्ञा हो तो अुन्हें भीतर लाअूँ।

स० यहां अुपस्थित करो।

[महाबलाध्यक्ष का प्रस्थान]

स० धवलकीर्ति, ये दोनों शिल्पी क्या सिंहल के निवासी है?

ध० हाँ सम्राट्! अिनका आदिस्थान तो सिंहल ही है किन्तु अपनी कलाप्रियताके कारण ये समस्त देशका पर्यटन करते हैं।

[महाबलाध्यक्ष कोदण्डके साथ घटोत्कच और वीरबाहुका प्रवेश। वे प्रणाम करते हैं।]

को० [संकेत करते हुअे] सम्राट्, यह शिल्पी घटोत्कच है और यह वीरबाहु।

स० घटोत्कच और वीरबाहु, सिंहलके शिल्पी किन्तु समस्त देशके अभिमान, राज्यमें सौंदर्यकी प्रतिष्ठा करनेवाले, प्रस्तरमें प्राण फूँकनेवाले! तुम लोगोंसे राज्यकी शोभा है। अिसीलिअे ये किसी भी दण्ड-विधानसे दंडित नहीं हो सकते। क्यों शिल्पी! सौन्दर्य किसे कहते हैं?

घ० सम्राट्, विषम वस्तुमें समता लाना ही सौंदर्य है।

स० और तुम क्या समझते हो, वीरबाहु?

वी० हृदयमें अनुरागकी सृष्टिका साधन ही सुन्दरता है।

स० यदि चोरीके प्रति हृदयमें अनुराग है तो वह भी सुन्दरता है, शिल्पी ?

वी सम्राट्, यदि चोरी सात्विक भावोंसे होती है तो वह सुन्दरता कही जा सकती है।

स० सात्विक भावोंसे कौनसी चोरी होती है ?

वी० कला, कविता और नारी-हृदयकी सम्राट्, जिसमें निरीहता और पवित्रता है।

स० और रत्नखंडोंकी चोरी, शिल्पी ?

वी० वह सुन्दरता नहीं है सम्राट्' रत्नखंडोंकी चोरीमें तृष्णा है, जिसका रूप दुःख है और फल पाप है।

स० तुम्हें ज्ञात है कि सिंहलसे भेजे गये रत्नखंड चोरी चले गये ?

वी० सम्राट्, मुझे अिसकी सूचना महाबलाध्यक्षसे ज्ञात हुअी। यही कारण है कि प्रातःकालसे हम लोगोंकी स्वतंत्रता पर प्रतिबंध है। हमारी रक्षा कीजिअे सम्राट्!

स० तुम लोगो की पूर्ण रक्षा होगी शिल्पी, पहले मेरे प्रश्नोंके अुत्तर दो।

वी० प्रश्न कीजिअे, सम्राट्!

स० तुम्हें दो सहस्र स्वर्ण मुद्राअें प्राप्त हो चुकी हैं ?

वी० हाँ, सम्राट्!

स० और घटोत्कच, तुम भी पुरस्कृत हो चुके हो ?

घ० हाँ, सम्राट्!

स० तुम लोग कार्य-समाप्तिके पूर्व ही पुरस्कृत क्यों हुअे?

घ० धवलकीर्तिकी प्रसन्नता ही अिसका कारण है।

वी० या हम लोगोंकी कार्य-कुशलता।

स०—क्या अिस बातकी संभावना हो सकती है कि अुन दो सहस्र मुद्राओंमे वे रत्नखंड भी चले गये हों?

घ० सम्राट्, यदि रत्नखंड अुन स्वर्ण मुद्राओंमें मिलते तो मैं मणिभद्रको अिस बातकी सूचना अवश्य देता।

वी० सम्राट्, मेरा निवेदन तो यह है कि यदि मुझे सहस्र मुद्राओंसे अेक मुद्रा भी अधिक मिलती तो मैं वह मणिभद्र के पास भेज देता।

स०—अिस बातका प्रमाण?

घ० सम्राट्, हृदयकी निर्मलताका प्रमाण केवल निर्मल हृदय ही पा सकता है।

स० क्यो शिल्पी, क्या तुम्हें मेरे हृदयकी निर्मलतामें विश्वास नहीं है?

घ० सम्राट्, हमें पूर्ण विश्वास है, अिसीलिअे आपसे निवेदन करना चाहते हैं। दूसरी बात यह है कि आज तक मैंने भगवान् बुद्धकी अनेक प्रतिमाओका निर्माण किया है। भगवान् बुद्धकी प्रतिमा तथा अुनके जीवनके अनेक चित्रोंको अंकित करते करते मेरे हृदयमे मेरे प्राणोंमें भी तथागतकी प्रतिमाका निर्माण हो गया है। अुनके अदर्श मेरी प्रत्येक श्वासमें निवास करते हैं।

अुनके 'आर्य सत्य' मेरी प्रत्येक यति और गतिमें संचरित हो गये हैं। अैसी स्थितिमें रत्नखंडोंकी प्रभा मेरे चरित्रको कलंकित नहीं कर सकती।

स० वीरबाहु, तुम्हारा क्या कथन है?

वी०—सम्राट्, जो रत्नखंड भगवान् बुद्धके चरणोंमें स्थान पानेके लिअे भेजे गये थे वे रत्नखंड निर्जीव हैं और हम लोगोंके हृदय सजीव। निर्जीवोंमें अितनी शक्ति नहीं है कि वे सजीवोंकी प्रकृतिमें बाधा डाल सकें। यदि आवश्यकता होगी तो रत्नखंडोंके स्थान पर हम लोग अपने हृदय भी विजड़ित करनेके लिअे प्रस्तुत होंगे।

स० दोनों ही अुच्च कोटिके कलाकार तथा शिल्पी हैं। घटोत्कच, बुद्धदेवकी प्रतिमाका निर्माण हो गया?

घ०—सम्राट्, पिछले सप्ताह ही पूर्ण हो गया।

स० फिर रत्नखंडोंको प्राप्त करनेमें अितना विलंब क्यों हुआ?

घ० सम्राट्, मैंने धवलकीर्तिसे रत्नखंडोंके शीघ्र पानेकी याचना की थी किन्तु अुन्हें अवकाश नहीं था।

स०—धवलकीर्तिको अवकाश नहीं था! क्यों धवलकीर्ति?

ध० सम्राट्, में पाटलिपुत्रका अुपासक हूँ। अुसके सौंदर्यको देखनेकी अिच्छा अनेक वर्षोंसे मेरे हृदयमें थी। मैं यहाँ आकर अुसे अधिकसे अधिक देखनेके अवसर प्राप्त करना चाहता था, अतः मै प्रायः आपके नगरके अुद्यानों और सरोवरों ही में अपने

जीवनकी अनुभूतियाँ प्राप्त करता था किन्तु फिर भी शिल्पियोंकी आवश्यकताका ध्यान मुझे सदैव रहा करता था।

घ० किन्तु गत संध्याको जब मैंने आपकी सेवामें आनेकी चेष्टा की तो मुझे ज्ञात हुआ कि पाटलिपुत्रमें आकर नृत्य-दर्शनकी ओर आपकी विशेष अभिरुचि हो गअी है, आप नृत्योंकी विशेष भाव-भंगिमाओंके चित्रसंग्रहमें अितने व्यस्त रहते हैं कि आपको मेरी प्रार्थनाओंके सुननेका अवकाश नहीं था।

स० घटोत्कच, मेरी रुचिकी समालोचना करनेका तुम्हें कोअी अधिकार नहीं है।

स० शांत, धवलकीर्ति, मुझे यह सुनकर प्रसन्नता है कि तुम्हें नृत्यकला विशेष प्रिय है। तुमने पाटलिपुत्रकी राजनर्तकीका नृत्य, सम्भव है, अभी तक न देखा हो। वह भी मैं तुम्हें दिखलानेका प्रयत्न करूँगा।

ध० सम्राट्, आपकी विशेष कृपा है।

स० मैं अुसे अभी दिखलानेका प्रबन्ध करूँगा। मेरे नृत्य देखनेका समय भी हो गया। [महाबलाध्यक्षसे] कोदंड, तुम अिन शिल्पियोंको न्याय-सभाकी अुत्तरशालामें स्थान दो। (शिल्पियोंसे) शिल्पी घटोत्कच और वीरबाहु, तुम्हारे अुत्तरोंसे मैं प्रसन्न हुआ। राजकीय नियमोंके आचरणमें यदि शिल्प-साधकोंको कुछ असुविधा हो तो वह अपेक्षणीय है। तुम ध्यान मत देना, शिल्पी!

वी० सम्राट्की जो आज्ञा।

घ० मुझे कोअी असुविधा नहीं है, सम्राट् ।

स० तो तुम लोग जाओ, कोदंड, राज्य-शिल्पियोंको किसी प्रकारकी असुविधा नहीं होनी चाहिये ।

को० जो आज्ञा, सम्राट् ।

स० और सुनो कोदंड, राजनर्तकी रत्नप्रभाको अिसी स्थान पर आने की सूचना दो । आज मैं धवलकीर्तिके साथ अिसी स्थान पर राजनर्तकीका नृत्य देखूँगा ।

(कोदंड और शिल्पी जानेके लिये अुद्यत होते हैं ।)

स० और सुनो, प्रियदर्शिकासे कहना कि वह मेरी वीणा ले आये । आज मैं फिर वीणा बजाना चाहता हूँ । केदाराके स्वरोंका सन्धान हो ।

को जो आज्ञा । (शिल्पियोंके साथ प्रस्थान)

स० [मणिभद्रसे] मणिभद्र, दुर्भाग्यसे यदि यह तुम्हारी अंतिम रात्रि हो तो तुम्हें अपने विश्वासी सम्राट्की वीणा सुननेका अवसर क्यों न मिले ? तुम भी सुनो ।

म० यह मेरा सौभाग्य है, सम्राट् !

ध० सम्राट्, फिर मुझे आज्ञा दीजिये ।

स०—क्यों धवलकीर्ति, क्या तुम हमारी वीणा नहीं सुनोगे और राजनर्तकीका नृत्य भी नहीं देखोगे ? तुम तो बड़े भारी कलाकार हो !

ध० सम्राट्, प्रशंसाके लिये धन्यवाद । मैं सोचता हूँ कि कलाकी अुपासनाके लिये पवित्र मनकी आवश्यकता है । मेरा मन अिस घटनासे बहुत अव्यवस्थित हो गया है ।

स० मैं अपनी वीणासे तुम्हारा हृदय व्यवस्थित कर दूँगा। फिर आज अिस वादन और नृत्यको तुम मणिभद्रका विदा-समारोह समझो। जिस मणिभद्रने पच्चीस वर्षों तक राज्यकी सेवा की है असके अंतिम क्षणोंको मुझे अधिकसे अधिक सुखमय बनानेका प्रयत्न करना चाहिये। अिस मंगल-वेलाके समय तुम्हें भी अुपस्थित रहना चाहिये! पाटलिपुत्रके न्यायाचरणमें सिंहलका भी प्रतिनिधित्व हो।

ध० सम्राट्, आपका कथन सत्य है किन्तु मैंने समझा, सम्भवतः आप अेकान्त चाहते हैं।

स०——नहीं धवलकीर्ति, अैसे समारोहोंमें अेकान्त टूटे हुअे तारकी तरह कष्टदायक है।

ध०——[सँभल कर] और सम्राट्, आपकी वीणामें वह स्वर है जो टूटे हुअे हृदयोंको भी जोड़ देता है। आप सगीत-कलामें नारद और तुम्बुरुको भी लज्जित करते है। आपकी संगीत-प्रियता अिसी बातसे स्पष्ट है कि आपकी मुद्राओं पर वीणा बजाती हुअी राजमूर्ति अंकित है। मैंने सुना है कि आपने अपने अश्वमेध यज्ञके अुपरात दो मास तक संगीतोत्सव किया था।

स यह सरस्वतीकी साधना करनेकी सबसे सरल युक्ति है, अच्छा धवलकीर्ति, तुम भी तो संगीत जानते हो!

ध० सम्राट्, आपकी साधनाकी समानता कौन कर सकता है किन्तु अिस कलाकी ओर मेरी अभिरुचि अवश्य है।

स० और नृत्य-कला भी तो जानते होगे!

ध० सम्राट्, नृत्य-कलाका मैंने अध्ययन मात्र किया है, अुसकी विवेचना कर सकता हूँ; किन्तु स्वयं नृत्य नहीं कर सकता।

स०—नृत्य-कला देखनेसे प्रेम है?

ध०—यह सिंहलके वातावरणका प्रभाव है।

स० मुझे प्रसन्नता है कि सिंहलका वातावरण मेरी अभिरुचिके अनुकूल है। फिर तो राजनर्तकीके नृत्यसे तुम्हें विशेष प्रसन्नता होगी।

ध० यह सम्राट्का अनुग्रह है।

स० और मेरी वीणाके स्वर भी आज मुखरित होंगे।

ध० आपकी वीणा तो स्वर्गीय-संगीत है, सम्राट्!

स० अधिक नहीं, धवलकीर्ति! किन्तु संगीत अीश्वरीय विभूतिकी वह किरण है जिससे मनुष्य देवता हो जाता है। हृदयका समस्त कालुष्य वीणाकी अेक झंकारसे ही दूर हो जाता है।

[प्रियदर्शिकाका वीणा लिये हुये प्रवेश। वह प्रणाम करती है]

स०—आओ प्रियदर्शिका, आज मैं फिर वीणा बजाअूंगा।

प्रि०—[वीणा आगे प्रस्तुत कर] प्रस्तुत है, सम्राट्!

स०[वीणा हाथमें लेते हुअे] केदाराके स्वरमें वीणाका संधान है?

प्रि० हाँ, सम्राट् अिसी रागकी आज्ञा प्राप्त हुअी थी।

स० राजनर्तकी रत्नप्रभाका श्रृंगार पूर्ण हुआ?

प्रि० वे तैयार हैं, आपकी सेवामें अुपस्थित होनेकी आज्ञा चाहती हैं।

स० अुन्हे नृत्यके साथ आने दो, केदाराके स्वरोंमें !

प्रि०—[सिर झुकाकर] जो आज्ञा ! [प्रस्थान]

स०—(वीणाके तारो पर अँगुलियाँ फेरते हुअे) सुनो धवलकीर्ति, केदारा के स्वरमें वह भावना है कि करुणाकी समस्त मूर्छना अेक बार ही हृदयमें जाग्रत हो जाती है। अैसा ज्ञात होता है जैसे सारा संसार तरल होकर किसीकी आँखोसे आँसू बनकर निकलना चाहता है। तारिकाअें आकाशकी गोदमें सिमिट कर पतली किरणोंमें प्रार्थना करने लगती हैं। कलिकाअें सुगधिकी वेदनासे फूल बन जाती है और ओस-बिन्दुमें डूबकर पृथ्वीके चरणोंमें आत्म-समर्पण करना चाहती है। अच्छा, तो सुनो वह रागिनी !

(समुद्रगुप्त वीणा पर केदाराका स्वर छेड़ते है। धीरे धीरे बजाते हुअे वे तन्मय हो जाते हैं। अुसी क्षण रत्नप्रभाका नृत्य करते हुअे प्रवेश। रत्नप्रभाके अग अंगसे रागिनीकी गति व्यक्त हो रही है। वह अट्ठारहवर्षीया सुन्दरी है। सौंदर्यकी रेखाओ ही में अुसके शरीरकी आकृति है। केश-कलापमें पुष्पोंकी मालायें, शरीरमें अंगराग और चन्दनकी चित्र-रेखायें हैं। मस्तकपर केसरका पुष्पाकन। बीचमें कुंकुमका बिंदु। नेत्र-कोरोंमें अंजनकी रेखा। चिबुकपर कस्तूरी-विंदु। कठमें मुक्ताहार। हृदय पर रत्न-राशि। कटिमें दोलायमाना किंकिणी और पैरोंमें नूपुर। वह केदारा रागकी साकार प्रतिमा बनकर नृत्य कर रही है। साथ ही सम्राट् समुद्र-गुप्तकी वीणासे निकलती हुअी रागिनी राजनर्तकीके पद-विन्यासमें

माधुर्य भर रही है। कुछ समय नृत्य करनेके अुपरान्त 'सम' पर राजनर्तकी हाथ जोड़कर भावमुद्रामें सम्राट् के समक्ष तिरछी होकर खड़ी हो जाती है।)

स० (प्रसन्न होकर) मेरे राज्यकी अुर्वशी, तुम बहुत सुन्दर नृत्य करती हो!........यह पुरस्कार! (गलेसे मोतीकी माला अुतारकर देते है।)

र० (हाथ जोड़कर) सम्राट्, मैं अिसके योग्य नहीं हूँ। मुझसे आज दो बहुत बड़े अपराध हुअे हैं।

स० [भ्रांत होकर] तुमसे? तुमसे कभी कोअी अपराध नहीं हुआ। कौनसा अपराध?

र० पहला अपराध तो यह है कि मैं आपकी मधुर वीणाके अनुकूल नृत्य नहीं कर सकी। आपके संगीतकी मर्यादा कभी भंग नहीं हुअी। आज मेरे नृत्यके कारण आपका संगीत कलुषित हो गया, सम्राट्!

स० नहीं रत्नप्रभा, अपने नृत्यसे तुमने मेरे स्वरोंमें सहायता ही पहुँचाअी है, हानि नहीं!

र० सम्राट्, मैं अनुग्रहीत हूँ। आपने कभी मेरे नृत्यके साथ वीणा नहीं बजाअी। आज आपने मेरे नृत्यको अनंत गौरव प्रदान किया है।

स० यह कलाकी साधनामें आवश्यक है। अच्छा दूसरा अपराध कौन सा है?

र० सम्राट्, आज आपने अितनी मधुर वीणा बजाअी कि संगीतकी अिस दिव्य अनुभूतिमें मेरे हृदयका समस्त दोष दूर हो गया और आज मैं अपना अपराध स्वीकार करनेके लिये प्रस्तुत हूँ।

स० मैं अुत्सुक हूँ सुननेके लिये, रत्नप्रभा?

र० सम्राट्। राजनर्तकी होकर मैंने अेक अन्य व्यक्तिसे भेंट स्वीकार की।

स०—[अुत्सुकतासे] किससे?

र० सिंहलके राजदूत श्री धवलकीर्तिसे।

स० तो अिसमे कोअी हानि नहीं। वे तो हमारे राज्यके अतिथि हैं। अुनसे भेंट स्वीकार करनेमे कोअी हानि नहीं है।

र० फिर भी सम्राट्, अन्य राज्यके व्यक्तिकी भेंट स्वीकार करनेकी आज्ञा मेरी आत्मा मुझे नहीं देती। मैं अिनकी यह भेंट आपही के चरणोंमें समर्पित करती हूँ। और वह यह है।

[सम्राट्के चरणोंमें दो हीरक-खंड समर्पित करती है।]

म०- (हीरक-खडोको देखकर प्रसन्नतासे) वे हीरक-खंड यही हैं, (अुद्वेगसे) महाराज प्रायश्चित्त नहीं करेंगे।

स० [रत्नोंको हाथमें लेकर] ठहरो, मणिभद्र, प्रसन्नतासे पागल मत बनो। (धवलकीर्तिसे) राजदूत धवलकीर्ति, क्या यह सत्य है?

ध०—(लज्जासे नीचे सिर करके मौन है।)

स० बोलो राजदूत! क्या तुम अिसी आचरणसे राजदूतत्वका निर्वाह करते हो!

ध० सम्राट्, मै लज्जित हूँ।

स० राजदूत, मुझे तुम पर पहले कुछ शंका हो रही थी। मणिभद्रकी आत्महत्याके विचारपर तुम मन ही मन प्रसन्न हो रहे थे, राजमहिषी कुमारिलाके कंठहारके रत्नोंकी पवित्रताका संदेश जतलाकर तुम राज्याधिकारको लांछित करना चाहते थे। तुम अिसीलिये शिल्पियोंपर प्रसन्न हुअे कि वे रत्न-खंडोंके लिये अधिक जिज्ञासा न करें, तुम रत्नप्रभाके नृत्यके पूर्व ही चले जाना चाहते थे जिससे तुम रत्नप्रभाके समक्ष दोषी होनेसे बच सको। मैंने अिसीलिअे आज वीणा बजाअी जिससे संगीतके वातावरणमे अपराधी विह्वल हो जाय और अपना रहस्य खोल दे। नहीं तो मर्यादाके संकटमें सगीतकी क्या आवश्यकता ? तुम मेरे ही राज्यमें आकर विषका बीज बोना चाहते हो ? बोलो, तुम्हें क्या दड दिया जाय ?

ध० सम्राट्, जो चाहें मुझे दंड दे ?

स० तुम जानते हो धवलकीर्ति, राजदूत दंडित नहीं होता अिसीलिये तुम निर्भीकतासे कहते हो, सम्राट् जो चाहें मुझे दड दें। किन्तु तुम यह ठीक तरहसे समझ लो कि समुद्रगुप्त पराक्रमाक न्यायको देवता मानकर पूजता है और अन्यायको दैत्य समझकर अुसका विनाश करता है। मैं अपने महासामंत सिरि मेघवर्नसे तुम्हारे दंडकी व्यवस्था कराअूंगा। तुमने राजमहिषी कुमारिलाके रत्नखंडोंको स्वयं कलुषित किया है, मणिभद्रके प्राण संकटमें डाले हैं, राजनर्तकीको मर्यादाके पथसे विचलित करनेका प्रयत्न किया है ! दंड तुम्हें पाकर सुखी होगा।

ध०—सम्राट्, मुझे अधिक लज्जित न कीजिये। स्वय परितापकी अग्निमें जल रहा हूँ।

स० अुस परितापकी अग्निके प्रकाशमें क्या यह स्पष्ट कर सकते हो कि ये रत्न-खड तुमने मणिभद्रकी संरक्षासे किस प्रकार मुक्त किये ?

ध० अपने अतिम समयमे मैं असत्य भाषण नहीं करूगा, सम्राट्! आपको अभी ज्ञात हुआ कि शिल्पियोकी कार्य-समाप्तिके पूर्व ही अुन्हें मैंने प्रसन्न हो निश्चित पारिश्रमिक दिया और वह अिसीलिये कि जब मेरे सामने मणिभद्र स्वर्ण-मुद्राअें गिने तो मैं अुनका ध्यान सिंहलकी मुद्राओकी विशेषताकी ओर बार बार आकर्षित करू। अैसे ही किसी अवसरपर मैं वे रत्न-खंड दृष्टि बचाकर मंजूषामें से निकाल लूँ। अपने कार्यकी सरलताके कारण ही मैंने अुन रत्नोंको भांडागारके भीतरी प्रकोष्ठमें रखनेका परामर्श मणिभद्रको नहीं दिया।

स० फिर रत्नप्रभाको तुमने किस विचारसे ये रत्न भेंट किये ?

ध० मैंने अुससे नृत्य करनेकी प्रार्थना की किन्तु अुसने कहा कि मैं सम्राट्की आज्ञाके बिना किसी दूसरेके समक्ष नृत्य नहीं करूंगी। मैंने बार बार प्रार्थना की और अुसकी सुन्दरताके अनुरूप ही हीरक-खंडोंकी भेट की। अुसने मौन होकर वे रत्न ले लिये न जाने क्या सोचकर और क्या समझकर।

स० फिर रत्नप्रभाने तुम्हारे सामने नृत्य किया ?

ध० नहीं सम्राट्, अुसने फिर भी अस्वीकार किया।

स० रत्नप्रभा, मैं तुमसे प्रसन्न हूँ। अब स्वीकार करो अपना यह पुरस्कार।

[हाथमें रखी हुअी माला देते हैं।]

र० [माला लेकर सिर झुकाकर] सम्राट्, आपकी प्रसन्नतामें ही मेरे पुरस्कृत होने की सार्थकता है।

स०--मेरे साम्राज्यमें अिस प्रकारका अन्याय नहीं हो सकता। अिसी बातसे मैं सुखी हूँ।

ध० सम्राट्, मुझे और किसी प्रश्नका अुत्तर देना है?

स०--नहीं, अब केवल महासामन्तको सूचना देनी है कि राजमहिषीके रत्न-खंडोंको भगवानबुद्ध की श्रद्धामे समर्पित न कर राजनर्तकीको भेंट करनेके अपराधमें जो दण्डकी व्यवस्था हो, अुसका प्रबन्ध करें।

ध० सम्राट्, आप अुन्हें सूचना देनेका कष्ट न अठावें। मैंने मणिभद्र के साथ विश्वासघात किया, राजमहिषीके हीरक-खंडोंको कलुषित किया, राजनर्तकी को मर्यादासे विचलित करनेकी चेष्टा की और सम्राट्, आपके प्रायश्चित करनेका अवसर अुपस्थित किया। अिन सबका, सम्मिलित दंड बहुत भयानक है। यदि मुझे सौ बार प्राणदंड दिया जाय, तब भी वह प्रर्याप्त नहीं है। मैं अपनी ओरसे सबसे बड़ा दंड स्वयं अपनेको दे रहा हूँ और वह है आत्महत्या! [कटार अपने हृदयमें मार लेता है और सम्राट्के समक्ष ही गिर पड़ता है।]

[मणिभद्र और राजनर्तकीके मुखसे आश्चर्य और दुःख की ध्वनि]

स० स्वयं दंडित होनेसे अब तुम अपराधोंसे मुक्त हुअे धवलकीर्ति, तुमने अपने नामको धवल ही रहने दिया!

ध० [अस्फुट स्वरोंमें] मैं....राजमहिषीको....अपना मुख....नहीं....दिखला....सकता....था....सम्राट्, मेरी....कलाकी ....अुपासना.....असत्य...है। मुझे.....शान्ति.....से......मरने .....दें! आपका....संगीत........

स० राजनर्तकी, तुम नृत्य करो, सच्चे अपराधी की मृत्युको मंगलमय बनाओ। मणिभद्रके स्थानपर धवलकीर्तिको विजय-विदा दो। मैं भी वीणा-वादन करूंगा। शिल्पियोंको मुक्त कर यहाँ आनेका निमन्त्रण दो। आज धवलकीर्ति मृत्युके समय मेरा मंगलवाद्य सुने। राजनर्तकी, नृत्य शीघ्र प्रारंभ हो।

[राजनर्तकी नृत्य करनेके लिअे प्रस्तुत होती है और सम्राट् समुद्रगुप्त अपने हाथमें वीणा लेते हैं।]

[परदा गिरता है]

जीवन

— ••• —

इन्दु शेखर

पात्र

प्रो० आनन्द	संगीतके आचार्य, कलाके पिता
जीवन	अेक भिखारी
कला	प्रो० आनन्दकी पुत्री
धनीराम	प्रो० आनन्दका शिष्य
विद्यापति	प्रो० आनन्दका शिष्य
डा० विश्वास	अेक डाक्टर

[अेक छोटा किन्तु साफ सुथरा कमरा साधारण ढंगसे सजा हुआ है। दीवारों पर कुछ चित्र टंगे हैं। दक्षिणकी ओर दीवार पर अेक घंटा टंगा है। कमरेमें अनेक द्वार हैं, जिनमेंसे दो अंदरके कमरोंमें खुलते हैं बाकी बाहरकी ओर। कमरेमें पूर्वकी ओर अेक विशाल खिड़की है और अुसके नीचे कालीन बिछा है। कोनेमें कुछ साज रखे हैं। दूसरी ओर अेक पलंग पड़ा है, जिस पर स्वच्छ चादर बिछी है और समीप ही दो कुर्सियां पड़ी हैं। प्रो० आनंद कालीन पर बैठे पूजा कर रहे हैं। घड़ीमें टन-टन सात बजते हैं]

आनंद — ओ, सात बज गअे और कला अब तक अूपर ही है। किस लड़कीसे मैं परेशान हूं। कला! ओ कला!

कला आओ, बाबूजी! आओ।

[कला मीराका अेक गीत गुनगुनाती हुआी आती है]

आनंद देखो, कला! आज फिर सात बज गअे और तुम्हे कुछ परवाह ही नहीं। वह नाच और गाना दोनों ही तो अधूरे पडे हैं। अैसे कैसे काम चलेगा, बेटी! थोड़ीही देरमें घनीराम और विद्यापति आ धमकेंगे। फिर तुम्हें कब और क्या सिखा पाअूंगा?

कला बाबूजी! मैं तो बहुत पहिलेसे तैयार बैठी थी पर आप पूजा कर रहे थे, अिसलिअे आशा से बाते करने लगी थी।

आनंद आशा! अरे! यह आशा कौन?

कला देखा, फिर भूल गअे। आशा वही, संतोषकी लड़की जो पिछले वर्ष म्यूजिक कान्फ्रेंसमें प्रथम आआी थी।

आनंद अूह, होगी। देखता हूं, अिसबार कलासे बढ़ कर कौन बाजी ले जाता है। पर, कला! तुम्हें अब समय बरबाद नहीं करना चाहिये, आज शामको ही राजेन्द्रहॉलमें तुम्हारा प्रोग्राम है। समय और संगीत दोनोंका कितना सुंदर मेल है, अेकके बिना दूसरा लगडा पडा जाता है। अिसीलिये तो संगीतज्ञोंने प्रत्येक रागको समयके साथ बाध दिया है। (कुछ चौंक कर) अरे! कहां बहक गया। हा, कला! जल्दीसे घुंघरू बांधो और पहले दो तोड़ दिखाओ ....

कला लीजिये, अभी दिखाती हूँ।

[कला घुंघरू बांध तोड़ लेती है और प्रो० आनंद तबले पर थाप देते हैं]

आनंद [टोक कर] देखा ? फिर भूल गअी। अंतरे पर रुककर फिरसे स्टैपिंग लो। ता... थेअी.... था .... हां अब ठीक हुआ, बिलकुल ठीक। देखता हूं, अब मेरी कला सुघड़ होती जा रही है, निखर रही है। यदि अिस बूढमें जरा भी समझ है, तो बेटी! अेक दिन तुम ज़रूर चमकोगी। मेरी कला ज़रूर चमकेगी, और तब मैं....आनंद....कितना....

कला फिर मज़ाक़ अुड़ाने लगे, बाबूजी! आशा तो कहती थी अभी मैं सिखतड़....

आनंद क्या कहा ? मेरी कला सिखतड़ ? बेटी आनंदने कभी किसी से मजाक नहीं किया। और फिर तुमसे कलासे। क्या कला भी मज़ाककी चीज़ है ?

[दरवाज़े पर खट-खटकी आवाज़ होती है]

आनंद कौन है ?

विद्यापति क्या हम अंदर आ सकते है, प्रो० साहेब ?

आनंद कौन ? विद्या और धनी। अरे भाअी! आओ, क्या तुम्हें भी अिजाजत लेकर अदर आना होगा ?

(दोनोंका प्रवेश)

आनंद—देखता हूँ आजकलके बच्चोंमें शिष्टाचार ज़रूरतसे ज़्यादह बढ गया है। अरे भाअी! यह तो आनंदका घर है। किसी मैजिस्ट्रेटकी अदालत नहीं, यहां कोअी रोक-टोक नहीं।

अरे खड़े-खड़े क्या मुंह ताक रहे हो? कुर्सी खींच लो, और बैठ जाओ, क्या बैठनेके लिअे भी आज्ञा लेनी आवश्यक है?

(दोनो कुर्सियाँ खींच कर बैठ जाते हैं)

कला तो बाबूजी! मैं अूपर जाकर आपके लिये....

आनंद- मेरे लिअे---मेरे लिअे क्या? नहीं, बेटी! तुम जाओ आराम करो, यहां कब तक खड़ी रहोगी? और फिर मुझे विद्यापति और धनीको भी तो अभ्यास कराना है।

कला- आप समझे नहीं, बाबूजी! मैं कह रही थी कि आप लोगोंके लिअे चाय यहीं ले आअूं?

आनद चाय, हाँ, जरूर ले आओ। वह तो मैं भूल ही गया था।

(कला का प्रस्थान)

दुनिया कहती है कि चाय भी अेक नशा है, पागल दुनिया तुम्हारा क्या विचार है, धनीराम?

धनी बेशक। जब कभी हम किसी वस्तुके लाभ और नुकसानको भूल कर अुसमें आनंद खोजने लगते हैं, भविष्यको भूल वर्तमानके सुखका सहारा लेने लगते हैं, वही वस्तु नशा बन जाती है। आनंदमें डूबनेका नाम ही तो नशा है।

आनंद क्या बच्चोंकी-सी बातें कर रहे हो! अिसका मतलब तो यह हुआ कि संगीत भी नशा है, क्योंकि संगीतमें मैं आनद अनुभव करता हूँ; नहीं-नहीं, अुसकी तानमें मैं डूब जाता हूँ।

धनी यही तो मैं कह रहा था, प्रो० साहेब। अिसी डूबनेका नाम है आनंद, और आनंद ही नशा है। अिसमें भविष्यका ध्यान नहीं रह पाता।

आनंद यह कैसे सभव है? संगीत कला है और कला नशा नहीं हो सकती स्वर्ग नरक नहीं बन सकता। क्या फूल और धूल दोनोंमें कोअी अंतर ही नहीं! (अुत्तेजित होकर) क्यों विद्यापति! क्या नशा भी कला हो सकता है? संगीत....कविता....

विद्यापति कविताकी बात रहने दीजिये, प्रो० साहेब। न जाने किस अशुभ घड़ीमें शाप-ग्रस्त देव-कन्या की भांति वह स्वर्ग-लोकसे पृथ्वी पर टपक पड़ी थी? गंगाने तो स्वर्गसे अुतर कर शायद जड़-जगत्को ही पवित्र किया था, किन्तु कविताने जड़ और चेतन दोनोंको ही पवित्र कर दिया। जो परब्रह्मकी भांति विश्वके अणु-अणुमें व्याप्त है, अुसकी संगीतसे क्या तुलना? अेक दिल बहलावकी वस्तु है और दूसरी मनुष्यको देवता बनाती है देवता!

आनंद यह तुम दोनोंको आज क्या हो गया है? क्या बहकी-बहकी बेतुकी बातें कर रहे हो? मालूम पड़ता है तुम दोनोंने कोअी नशा किया है। कहाँ सगीत और कहाँ कविता...

धनी संगीतकी बात ही निराली है। यूं तो दोनों ही मन बहलावकी सामग्री हैं पर संगीतकी बात ही और है। कविता तो सगीतकी छाया है, विद्यापति, केवल छाया। अुसमें शब्द हैं, स्वर नहीं जिसकी अेक तान सुननेसे सिर स्वयं हिलने लगता है...

आनंद (अुत्तेजित और प्रसन्न होकर) शाबाश धनीराम! शाबाश! सिर स्वय हिलने लगता है....

धनी (स्वर और अूंचा कर) मेघकी मद-मंद मृदंग-ध्वनि सुन कर समस्त मयूरोकी गरदनें अेकबारगी ही क्यों अूपर अुठ जाती है! और वे आलाप क्यों भरने लगते हैं? यह है, सगीतका प्रभाव। क्या सपेरेकी बीनके आगे मत्रमुग्ध सर्पको लहराते नहीं देखा? सितारकी मींड़ पर हरिणको जान गंवाते नहीं सुना! फिर भी कहते हो संगीतसे कविता अूंची है....

विद्यापति मानता हूँ, संगीतमें सिर हिला देनेकी शक्ति है पर वह हृदयको नहीं हिला पाता। वह कानोंमे अमृत घोल सकता है, पर हृदयके हलाहल को नहीं खींच सकता। अुससे हृदयका मरुस्थल नहीं सींचा जा सकता। वह पत्थरको नहीं पिघला सकता, मुर्दोमें प्राण नहीं फूंक सकता। जानते हो, धनीराम, संगीत तान और स्वरकी जमीन पर रेंगनेवाला जानवर है और कविता खुले आकाशमें फुदकनेवाली कोयल। दोनोंमे अुतना ही अंतर है, जितना बंदी और स्वतंत्र जीवनमे।

आनंद (अुत्तेजित हो जाते है....जुबान लड़खड़ाने लगती है) यह सब क्या हो रहा है? आनदके घरमे सगीतका अपमान कलाका अपमान....

[चायकी ट्रे लिये कलाका प्रवेश]

कला -मेरा अपमान? मेरा अपमान तो किसीने नहीं किया, बाबूजी!

आनंद तुम नहीं जानती, कला ! आनद नशा है, कला नशा है, संगीत....संगीत कुछ भी नहीं, केवल मन बहलानेकी वस्तु, जो कुछ है कविता। अिससे अधिक संगीतका और क्या अपमान हो सकता है ? और, वह भी मर सम्मुख, मेरे ही घरमें....

कला कुछ भी समझमे नहीं आता, किसने यह अपमान किया ?

धनी कोअी विशेष बात नहीं, विद्यापतिके विचारमें कविता सगीतसे श्रेष्ठ है।

आनंद और तुमने अुसे मान लिया, क्योंकि सगीत तो केवल दिलबहलावकी चीज है। फिर कहते हो कि विशेष बात नहीं हुअी। तुम क्या जानोगे ? कितनी लगन और आशासे तुम्हें मैंने शिक्षा दी थी लोभ के लिये नहीं....

(प्रो० आनंदके गलेमें शब्द अटक जाते हैं और वे लुढक जाते हैं)

कला——बाबूजी !

(चायकी ट्रे कलाके हाथसे गिर जाती है, वह प्रो० आनंदको थामना चाहती है, विद्यापति आगे बढ़कर प्रो० आनंदके शरीरको पकड़ता है)

ठहरिअे, विद्यापति बाबू ! दौड़कर अूपरसे लोटा-भर जल ले आअिअे, बाबूजी बेहोश हो गअे हैं। वे सब कुछ सह सकते हैं पर संगीतका अपमान नहीं।

धनी——मैं किसी डाक्टरको बुला लाता हूं।

कला किसी––किसी डाक्टरसे काम नहीं चलेगा, धनीराम बाबू ! डा० विश्वासको आप जानते हैं न ? शांतकुटीके मालिक–– अुन्हींको लाना होगा ।

धनी अभी लीजिये, दो मिनटमें आया ।

[धनीरामका प्रस्थान]

आनंद––(बड़बड़ाते हुअे) संगीत नशा है कला नशा है आनंद नशा है बस नशा....मैं नशा....मेरी कला नशा .... सब कुछ....

[कला विद्यापतिके हाथसे जलका लोटा लेकर प्रो० आनंदके मुख पर छींटे डालती है]

कला यह आपको क्या हो गया है ? बाबूजी ! देखिअे आखें खोलिअे, मैं हूँ...कला आपकी कला ।

आनंद (बड़बड़ाते हुअे) कला आनंदकी कला, वह तो मर चुकी मेरे सामने, हा-हा, मेरी आखोंके सामने सिसक, सिसक कर....

[डा० विश्वास और धनीरामका प्रवेश]

कला (चिंतित स्वरमें) डाक्टर साहब ! देखिये बाबूजीको क्या हो गया है ! जो कुछ मनमें आता है बक रहे हैं।

डाक्टर विश्वास रखिये, सब ठीक हो जाअेगा । मैं जरा नब्ज देख लूं ....

[प्रो० आनंद जरा खासते हैं, फिर बड़बड़ाने लगते हैं]

आनंद संगीत कुछ नहीं, केवल नशा कला नशा....

डाक्टर देखिये, कलादेवी ! प्रो० आनंदको मानसिक चोट पहुंची है। मैं राहमें मि० धनीरामसे सब कुछ सुन आया हूँ। आप चिंता न करें, केवल सिर पर बर्फकी पट्टी बदलती रहे, क्योंकि बुखार तेज होता जा रहा है। अिस समय टेम्परेचर १०४ है और यदि अधिक बढ़ जाये तो मुझे बुलवा भेजिये। हां देखिये, प्रो० आनंदको संगीतका बहुत शौक है न? आप लोग कोअी राग तो छेड़िये, संभव है, अिसका अच्छा प्रभाव पड़े।

विद्या क्या गाअूं, कौन-सा राग....

डाक्टर- कोअी भी धुन छेड़िये, मगर जल्दी. ..

(विद्यापति तंबूरा ले मालकोसकी धुन छेड़ता है, अेक दो पद गाता है ..., प्रो० आनंद आंखें खोल देते है)

आनंद—यह क्या कर रहे हो, विद्यापति? मैं तुम्हारे पांव पकड़ता हूँ। माना कि संगीत नशा है, मन-बहलावकी वस्तु है, पर मेरे सामने अिस तरह अुसकी हत्या न करो। अुसे मारना, मगर मेरे मरनेके बाद। डा० विश्वास ! कला ! धनी ! तुम सब चुप हो? अरे ! दोपहर तक हुआ नहीं और तुम मालकोसके पद गाकर मेरी छाती पर कीलें ठोक रहे हो। अंधेर.. भगवान . मुझे....

डाक्टर (विद्यापति से) यह आपने भूल की, आपको समयका राग गाना चाहिये था। लेकिन कोअी चिंताकी बात नहीं। विश्वास रखिये, संध्या तक प्रो० आनंद स्वस्थ हो जाअेंगे। मै दवा भिजवा रहा हूँ।

धनी मै दवा ले आता हूँ।

कला नहीं, धनीराम बाबू! आप दोनों अब घर जाअिये। मैं बाबूजी की तबियत पहचानती हूँ। आपके रहनेसे लाभके बजाय हानि होनेकी अधिक संभावना है। क्यों, ठीक है न, डाक्टर विश्वास?

डाक्टर आप ठीक कह रही है। असी बीमारीमें रोगीकी आंखोंके सामने असी कोअी चीज नहीं पड़नी चाहिये जिससे वह अुत्तेजित हो अुठे। चलिअे, आप मेरे साथ बाहर चलिअे।

(तीनोंका प्रस्थान। अुनके चले जानेके बाद कला सितार लेकर बैठती है और धीमे-धीमे स्वरमें अेक गत बजाती है। प्रो० आनंद खासते हैं और फिर धीरे-धीरे आंख खोल देते हैं।)

आनद (चारों ओर सशंकित नयनोंसे देख कर) कला!.... बेटी!.... वे कहाँ हैं?

कला—कौन? बाबूजी! डाक्टर विश्वास?

आनद नहीं, बेटी! विश्वास नहीं, धनी और विद्यापति।

कला अुन दोनोंको मैंने वापस भेज दिया है बाबूजी! पर आप कांप क्यों रहे हैं? आप चारो ओर त्रस्त होकर क्यों देख रहे हैं? आप आराम से लेटिये। डाक्टर विश्वासने कहा है कि....

आनंद विश्वासने कहा है—क्या कहा है, बेटी? यही न विश्वास रखो। ठीक ही तो कहा है। पर अुस बेचारेको क्या मालूम कि मेरा विश्वास अुठता जा रहा है। धनी और विद्याको मैं किस आशा और लगनसे संगीत सिखा रहा था, यह और कोअी भले ही न जाने पर तुम तो जानती हो, बेटी। सोचता था धनी और

विद्या दोनोंमेंसे जो अुपयुक्त होगा, अुससे कलाका मेल करा मैं सुखकी सांस लूंगा। कला प्रसन्न होगी--खिल अुठेगी, संगीत धन्य हो जावेगा। दुनिया आश्चर्यसे देखेगी। देशमें ही क्यों विदेशमें-- नहीं नहीं, समस्त भूमंडल पर तहलका मच जावेगा। (आवाज और अूची कर) लोग वाहवाह कर अुठेंगे, चारों ओरसे सफलताकी बधाअी और धन्य-धन्यकी पुकार सुनाअी देगी, और फिर आनद, आनद पागल....

कला बाबूजी, आप बहुत बोलिअे नहीं, अिससे आपकी बीमारी बढ़ ....

आनंद नहीं, बेटी! तुम नहीं समझ सकतीं। मेरे सारे अरमान धूलमें मिल गअे, स्वप्न चकनाचूर हो बिखर गअे, मेरा संगीत सो गया! धनी कलाको दिल-बहलावकी वस्तु समझता है और विद्या....अुसे गर्व है कविताका। किंतु, ठहरो....कविता भी तो कला है। पर संगीत....नहीं-नहीं, यह नहीं हो सकेगा। मैं कहे देता हूं, बेटी, यह असंभव है, अेकदम असंभव।

कला क्या असंभव है, बाबूजी?

आनंद यही न, अरे! तुम समझती क्यों नहीं, बिटिया! यह कैसे हो सकता है? संगीतकी चिता जला कर विद्या और कला नहीं मिलाअे जा सकते। तो क्या....कला अकेली ही रह जाअेगी? मेरे लिये आनंदके लिये या अपने लिये? फिर कला कलाके ही लिये जीवित रहे, यही ठीक है। विद्यासे असका मेल नहीं, धन अुसे भाता नहीं, फिर यही ठीक है। कला कलाके लिअे स्वय के लिअे....

[बाहरसे गानेकी आवाज आती है। कोअी भिखारी गा रहा है। पहले आवाज पास आती जाती है फिर धीरे-धीरे कम होने लगती है, जैसे वह दूर जा रहा हो।]

आनंद (अेक दम चौंककर) वह जा रहा है, कला!

कला कौन? बाबूजी! कौन जा रहा है?

आनंद (झुझलाकर) सुनती नहीं हो? वह कितना अच्छा गाता है; अुसके स्वरमें कितना दर्द है कितनी मिठास है। अुसे बुलाओ अभी बुलाओ।

कला अभी बुलाती हू।

(दरवाजा खोलकर कला बाहर जाती है और भिखारीको साथ ले आती है। भिखारी किशोर है २० वर्षका, रंग-रूप सुदर, किंतु फटे-हाल। वह आश्चर्यसे चारों ओर देखता है)

आनंद आओ, अंदर आओ, यहा बैठो यहा मेरे पास।

भिखारी सरकार! आपके पास?

आनद हा हां, मेरे पास आनदके पास।

भिखारी मै ग़रीब हूं, सरकार! भिखारी-दर-दर भीख मागनेवाला।

आनद अच्छा, भिखारी! वह गीत जो म गा रहे थे जरा फिरसे गाओ। बड़ा सुंदर है वह गीत!

(भिखारी गाता है)

अभी ठीक नहीं हुआ, जरा खुल कर गाओ। स्वरको अूंचा करो शर्माओ नहीं। (भिखारी रोने लगता है। फूट-फूट कर सिसकिया भरने लगता है)

आनंद -अरे ! तुम रो रहे हो ! क्यों ? अितना सुंदर स्वर पाकर रो रहे हो ?

भिखारी, मालिक ! तीन दिनसे भूखा फिर रहा हूं ।

आनंद कला ! बेटी, देखो यह भूखा है, अिसे ....

भिखारी---नहीं, मालिक ! आप समझे नहीं । समझे भी नहीं, समझ भी नहीं सकेंगे । तीन दिनसे यही गीत गाता फिर रहा हूं । किसीने पूछा तक नहीं । आपने दया करके घर बुला कर दो बात कीं---अिसी खुशीके मारे हृदयमें रुका हुआ तूफान अुमड़ पड़ा ।

आनंद (आश्चर्यसे) भिखारी ! भिखारी नहीं कलाकार ! सुना बेटी !, तुमने ? वह भूखके लिये नहीं रोता, पेटके लिये आंसू नहीं बहाता, अुसे अिस बातका दुख है कि कोअी अुसकी बात नहीं पूछता ! पर, बेटी, आनंदके घरमें भी क्या यह भूखा ही रहेगा ? जाओ, देख क्या रही हो ? कुछ खानेको लाओ । मै अिसे अपने हाथसे खिलाअूंगा ।

कला ठीक है, बाबूजी ! मैं अभी लाती हूं ।

(कलाका प्रस्थान)

आनद---तुम्हारा नाम क्या है, युवक ?

भिखारी जीवन ।

आनद· जीवन ओह ! जीवन ? जीवन भूखा है, जीवन की कोअी बात नहीं पूछता स्वार्थी ससार । जीवनका अनादर....

(अूपरसे गानेकी आवाज आती है, कला प्रसन्न-चित्त हो कुछ गा रही है । जीवन और आनंद दत्त-चित्त हो कान लगाकर सुनते है अेक मिनट बाद)

आनंद सना तुमने, जीवन ! कितना सुंदर और मधुर है अुसका स्वर ! जानते हो वह कौन है ?

जीवन लड़की ।

आनंद पागल ! अरे वह लड़की नहीं, कला है हाँ, जीवन ! वह कला है ।

जीवन कला ?

आनंद हाँ कला, कला तुम्हें पसंद है, जीवन ?

जीवन जी हाँ, बहुत पसंद ।

(खाना लिअे कलाका प्रवेश)

आनद कला ! देखो जीवनको जरा बगलके कमरेमें ले जाकर खिलाओ, बेटी ! मैं कुछ समयके लिअे अकेला रहना चाहता हूँ । बुरा न मानना, बेटी ! जीवन तुम भी....

कला बाबूजी आपकी तबियत.......?

आनंद मेरी तबियत बिलकुल ठीक है । मैं स्वस्थ हूँ । मेरी चिंता न करो । जाओ, जीवन ! कलाके साथ जाओ, और सुनो, कला ! जीवनका सत्कार करो, दुनियासे अूबकर जीवन यहां आया है कलाके पास ।

कला—आओ, जीवन ! मेरे साथ आओ ।

(जीवन और कलाका प्रस्थान)

आनंद (आत्म-चिंतन) जीवन कितना सुंदर नाम है और रंग-रूप भी बुरा नहीं । फटे वस्त्र हैं तो क्या हुआ ? कलाकी दृष्टि चिथड़ों पर न पड़ अुसके कोमल हृदयपर पड़ेगी । कलाने

बाह्य आडंबरोंकी परवाह ही कब की है? जीवन और कला, कला और जीवन! कितना सुदर है यह मेल! कला जीवनके बिना कहा रह सकती है? और कब रही है? जीवनको भी जीवनकी रक्षाके लिये कला चाहिअे ही। जिस जीवनमे कला नहीं वह पशु-जीवन है कूडेका ढेर है। मैं जीवनको कलाके साथ मिलाअूंगा - मैं आनद....

(दरवाजे पर खट-खटकी आवाज होती है)

आनंद--कौन?

(डा० विश्वास का प्रवेश)

डाक्टर (विस्मयसे) यह क्या, प्रो० आनंद! आप कमरेमें अकेले टहल रहे है? कलादेवी कहा हैं, भाअी देखूं आपका बुखार....

आनंद बुखार, कैसा बुखार?

विश्वास (नब्ज देखता हुआ) वंडरफुल! हाअू अेमेजिंग! आपका बुखार क्या हुआ? अभी तीन घंटे पहिले १०४ डिग्री बुखार था। विश्वास कीजिये मैंने खुद थर्मामीटर लगाकर देखा था। पर, अब टेंपरेचर अेकदम नॉरमल है अेकदम नॉरमल।

आनद डा० विश्वास! आप तो जानते ही हैं कि मैं आवश्यकतासे अधिक भावुक हूँ। और अिसी कारण मैं संगीत और कलाके विरुद्ध कुछ नहीं सुन सकता।

डाक्टर वह तो मैं सब सुन चुका हूँ प्रो० आनंद! पर यह तो बताअिये कि वह बुखार कहां गया? और दवाअी दवाअी

तो सामने बोतलमें पड़ी अपने भाग्यको रो रही है। जिस प्रकार कॉर्क से बोतलका गला घोटकर मैंने अुसे भेजा था वह वैसी ही घुटी पड़ी है। कॉर्क खोलकर अेक बार भी अुसे सांस लेनेका अवसर नहीं दिया गया....

(कला और जीवनका प्रवेश। जीवनके कपड़े काले हैं अुसका रूप निखर आया है। वह साफ़ दिखाओ पड़ता है)

डाक्टर मैं कहता था न, कलादेवी! प्रो० आनद संध्या तक स्वस्थ हो जायेंगे। पर आप (जीवनकी ओर अिंगित कर) आपकी तारीफ़?

आनद डा० विश्वास! अिनकी तारीफ़की अभी आवश्यकता नहीं। केवल अितना ही जान लेना पर्याप्त होगा कि अिनका नाम है जीवन। कलाकी सहायतासे जीवन कितना चमक अुठा है! जीवन! कितने सुंदर लगते हो तुम---कितने स्वस्थ! फूलसे भी सुंदर, दूबसे भी कोमल, चादनीसे भी अुज्वल, वसत से भी मधुर, तपोवनसे भी शात, गंगाजलसे भी सात्विक। अच्छा, मै तुम्हारा गीत सुननेको व्याकुल हूँ। अब सुनाओ आवाजमे दर्द भरकर। डा० विश्वास आप भी सुनिये....

जीवन जो आज्ञा, अभी सुनिये।

(जीवन गाता है)

आनद---जरा और खुलकर। स्वरको अूचा करो।

(स्वर बढ़ता जाता है। प्रो० आनंद चिल्लाते हैं, वाह वाह! डा० विश्वास सिर हिलाते हैं। गाना समाप्त हो जाता है)

आनंद· जीवन तुम कलाकार हो, गायक हो, तुम्हारी आवाजमें दर्द है, कितनी कसक है कितनी गूज है! डाक्टर आपने कभी अैसा गीत सुना ?

डाक्टर कभी तो नहीं पर आज जरूर सुना है।

आनद—अच्छा, कला! जो नाचवाला गीत तुम राजेन्द्रहालमें सुनानेवाली हो, वही सुनाओ, झिझको नहीं, यहां सब अपने ही है। जीवनके सामने सुनाओ। अपनी समस्त साधनासे लगनसे।

(कला गाती है। नीरवता छा जाती है। धीरे-धीरे गीत समाप्त हो जाता है)

जीवन (अुत्साहित होकर) कितना सुंदर गाती है! कला! तुम कितना सुंदर गाती हो!

डाक्टर आपने कमाल कर दिया, कलादेवी! मैं दावेसे कह सकता हूँ कि शहर भरमें अैसा कोअी कलाकार नहीं। कौंग्रेचुलेशंस, प्रो० आनंद! कौंग्रेचुलेशंस! ओह वंडरफुल!

कला (प्रो० आनंदकी ओर देखकर) ओह! बाबूजीको क्या हुआ? फिर बेहोश हो गये क्या? डाक्टर साहब, देखिये तो सही।

डाक्टर (देखकर, चिंतित स्वरमें) प्रो० आनंदका हार्टफेल हो गया है।

कला—(कातर स्वरमें—घबड़ा कर) क्या कहा! हार्टफेल हो गया है? ओह....जीवन!

जीवन कला!

[परदा गिरता है]

दीवारपर केवल नये सालका अेक कैलेण्डर लटका है। अेक अलमारी है; अुसमें कुछ पुस्तकें, टीनके डब्बे, दो चायदानियाँ और दो-तीन गिलास हैं। अूपर आलेमे सस्ती टाअिमपीस पौने आठ बजा रही है।

कमरे के बीच मे तीनों चारपाअियाँ पास-पास बिछी हैं। बिछावन साधारण है। दरवाजे के पास वाली चारपाअी पर अेक स्त्री अनमनी-सी बैठी है। अुसका रंग गोरा और आकृति सुन्दर है। अुमर लगभग ४५ है। दूसरी चारपाअीपर अेक पुरुष आखें बन्द किये लेटा है। अुसे ज्वर चढ़ा है। क्षण-क्षणमें जागकर वह स्त्रीकी ओर देख लेता है। फिर लम्बी साँस लेकर आँखें मीच लेता है। अुसकी आयु ५० के अूपर है। तीसरी चारपाअीपर अेक लड़की कम्बल ताने गहरी नींदमें सोअी है। सहसा स्त्री चौंक कर अुठती है। नीचे कहीं तीन-चार आदमी बोलते सुन पड़ते हैं]

स्त्री (खुश होकर) जान पड़ता है अशोक आ गया?

पुरुष (आँखें खोलकर) अशोक आ गया है? कहां है!

स्त्री आप अठे क्यों? लेट जाअिये। मैं देखती हूँ।

(स्त्री शीघ्रतासे चली जाती है। पुरुष अुसी तरह बैठा रह जाता है। स्त्री फिर आती है।)

स्त्री (घबराकर) आप अपनी कुछ भी चिंता नहीं करते। अशोक नहीं आया है। राम बाबू देहली जा रहे हैं अशोककी छुट्टियाँ आजसे शुरू होती हैं। शायद कल आयेगा।

(वे चुपचाप आँखे बन्द कर लेते हैं। स्त्री अपनी खाट पर आ बैठती है।)

पु०—(आँखे खोलकर) सुनती हो?

स्त्री—क्या जी?

पु०—पंडित रामसेवकने अशोकका वर्ष-फल बनाया है। कहता है अिस वर्ष ग्रह बहुत सुन्दर हैं। जल्दी ही अुसका नाम संसार-भरमें फैल जायगा।

स्त्री—(प्रसन्नतासे भरकर) सच!

पुरुष—पंडित रामसेवक माने हुअे ज्योतिषी हैं। अुनकी बात झूठ नहीं हो सकती और देखो न, अभीसे अुसका नाम अखबारोंमें छपने लगा है।

[कहते-कहते पुरुषकी छाती अुमड़ती है। बोल नहीं सकता]

स्त्री—(श्रद्धासे) पुत्रके भागके साथ माँ-बापकी किस्मत जुड़ी होती है।

पुरुष—(गद्‌गद् होकर) कुछ भी हो दुनिया अिस बातको जान लेगी कि दामोदरस्वरूपने आप मुसीबते अुठायीं परंतु लड़केको शिक्षा देनेमें कसर न रखी।

[अिसी समय पासकी चारपाओ पर लड़की बड़बड़ा अुठती है]

स्त्री, पुरुष—(अेक साथ चौंककर) क्या है अनिता! क्या है बेटी?

लड़की—(नींदमें) भअिया....(जोरसे) भअिया तुम कहाँ जा रहे हो! (करुणासे) मैं तुम्हारे साथ चलूँगी, भअिया (जोरसे) भअिया........

स्त्री—(पास जाकर) अनिता-अनिता!

अनिता (हड़बड़ा कर) माँ ?

स्त्री क्या है बेटी !

[अनिता अुठ बैठती है। वह लगभग १५ सालकी सुन्दर लड़की है। घबराहटके कारण अिधर-अुधर देखती है। पर माँको देखकर ढाढ़स होती है]

स्त्री (पास बैठ कर) सपना देखती थी बेटी ! क्या था ?

अनिता बड़ा बुरा सपना था, माँ ! भअिया न जाने कहाँ चले गये ?

स्त्री (मुसकरा कर) कहाँ चले गये, अनिता !

अनिता——माँ ! अेक वाटिकामें मैं और भअिया बैठे थे कि अेक युवक ने आकर कहा——'अशोक ! लड़ाअी आरंभ हो गयी। वे पागल हो अुठे है। आओ हम चलें' भअिया अुसी वक़्त दौड़ पड़े। मैंने कहा 'कौन लड रहा है, भअिया ?' भअिया नहीं बोले। और वे चले गये, अुसी तरह नंगे पाँव और निहत्थे ! (कुछ रुककर) भअिया नहीं आये, माँ !

स्त्री कल सबेरे आयेगा, बेटी !

पुरुष——(सोचकर) सपने का फल अच्छा होगा ! डरनेकी बात नहीं।

स्त्री, अनिता (अेक साथ) सच ! अच्छा होगा ?

पुरुष——हाँ, अैसे सपनोंसे अुमर बढ़नेका योग होता है।

अनिता——तब तो ठीक है माँ। (मुड़कर) ज्वर कैसा है पिताजी ?

पुरुष--(हँसकर) अुतर जायगा बेटी ! (कुछ आहट पाकर अूपर देखते हैं) रामदास आओ रामदास, ! कैसे आये ?

रामदास--ज्वर अुतरा, भअिया !

दामोदरस्वरूप अुतर जायगा ! हाँ, यदु आया क्या ?

रामदास वही तो पूछता था ! अशोक भी नहीं दिखाअी पड़ता । क्या बात है ? घरमें तो रो-रोकर पागल हो रही है ।

दामोदरस्वरूप---तुम्हारी स्त्री बड़ी कच्ची है ! अरे ! वे क्या बालक हैं जो खो जायँगे !

रामदास यह तो मैं भी जानता हूँ भअिया ! पर वह नहीं सुनती ! कहती है तुम जाओ !

स्त्री वह माँ है, रामदास ! माँका दिल बड़ा पापी होता है !

रामदास और तुम क्या हो भाभी ?

दामोदरस्वरूप अरे रामदास ! यह कम नहीं है । घंटोंसे गाड़ीकी गड़गड़ाहट कानोंमें गूँज रही है । यह अनिता तो सोते-सोते भी भअिया-भअिया चिल्ला रही थी । (हँसता है)

रामदास-(पिघलकर) भअिया ! सालमें अेक बार तो आते हैं !

[दामोदरस्वरूप आँखें मीच लेता है । रामदास अुठकर चला जाता है ! अनिता फिर मुँह लपेटकर लेट जाती है । केवल स्त्री (कलावती) अुसी तरह बैठी रहती है । घड़ीमें नौ बजे हैं । वह झुककर चारपाअीके नीचेसे अेक टोकरा निकाल लेती है । अुसमें सूतकी कुकड़ियाँ और अटेरन रखा है । कलावती चुपचाप सूत अटेरती है ।]

[पटाक्षेप]

दूसरा दृश्य

[समय संध्याके पाँच बजे हैं। वही विशाल भवन। नीचेके अेक दालान में कलावती रसोअीके प्रबन्धमें लगी है। अशोक अब तक नहीं आया। चिट्ठी आयी है "कि शहरमें अशान्ति है, हिन्दू-मुस्लिम-लड़ाअीका भय है। आप लोग चिन्ता न करना। हमें बिलकुल डर नहीं है।" पर यहाँ सब चिन्ता कर रहे हैं। यदुकी माँ (जगवन्ती) तो रो-रोकर पागल हो रही है। कलावती भी अुद्विग्न है। दिल अुसका भी धक्-धक् कर रहा है। अुसी समय जगवन्ती वहाँ आती है। वह ४० के लगभग है। रोते-रोते अुसका चेहरा फीका पड़ रहा है।]

जगवन्ती तुमने सुना, भाभी! वहाँ लड़ाअी हो रही है। अब क्या होगा?

कलावती ठीक होगा, जगवन्ती! कॉलेज तो शहरसे दूर है।

जगवन्ती तुम नहीं जानती भाभी, कॉलेज दूर होगा पर वे ज़रूर गये होंगे।

कलावती तुम आप ही सोच लेती हो कि वे गये होंगे! कॉलेजवाले क्या अुन्हें जाने देंगे?

जगवन्ती चाहती तो मैं भी हूँ कि वे गये हो पर भाभी, मन नहीं मानता। मैं क्या करूँ? (रोने लगती है)

कलावती (हँसकर) अरे, तुम रोने लगीं! कितनी कच्ची हो तुम! (रामदासको देखकर) क्या है जी? क्या खबर आअी?

रामदास (बोलते हुअे हाँपता है) अखबार आया है!

जगवन्ती, कलावन्ती (अेक साथ) अखबार! क्या लिखा है अखबारमें?

रामदास (पढता है)....... शहरमें बहुत जोरका दंगा हो गया है।

कलावती ओह!

जगवन्ती कॉलेजका कुछ नहीं लिखा!

रामदास (अुसी तरह पढ़ता हुआ) नगर कॉंग्रेस कमेटी दंगा रोकनेका प्रयत्न कर रही है। अुसने सरकारके साथ सहयोग किया है; लेकिन सबसे बढ़कर कॉलेजकी पार्टी है.... ....।

कलावती, जगवन्ती (अेक साथ कॉंपकर) कॉलेजकी पार्टी ....

रामदास (अुसी तरह) मानवताके पुजारी १५ नवयुवक पागलोंकी तरह आगमें बढ़े चले जा रहे हैं। अुन्होंने सैकड़ों बेगुनाह आदमियोंको मरनेसे बचा लिया है। अुनका सरगना अेक खूबसूरत और तगडा जवान है। अुसका नाम अशोक है....।

कलावती (कॉंपकर) अशोक! मेरा अशोक!!

जगवन्ती लेकिन यदुका नाम नहीं है। वह जरूर अुसके साथ होगा। वह अशोकको नहीं छोड़ सकता।

कलावती (अनसुना करके) अशोक अब नहीं आयेगा। अशोकका नाम............

(वह बोल नहीं सकती, अुसका हृदय अुमड़कर बह पड़ता है।)

रामदास (ढाढ़सके स्वरमें) भाभी! रोती हो! नहीं भाभी, जो पुण्यात्मा हैं, भगवान् अुनकी रक्षा करते हैं।

जगवन्ती भगवान्।....भाभी, मैं कहती थी, मेरा दिल घबड़ा रहा है। मैं जानती थी। बेटा माँके दिलहीमें तो रहता है। भाभी! तुम रोती हो लेकिन मै क्या करूँ....मैं क्या करूँ? (रामदाससे) सुनते हो, मैं जाअूँगी! मैं अभी जाअूँगी..........।

रामदास कहाँ जाओगी? वहाँके रास्ता बंद हैं!

कलावती, जगवन्ती (अेक साथ) रास्ते बंद हैं!

रामदास हाँ भाभी! अब तो हमें परमेश्वरसे ही प्रार्थना करनी चाहिअे।

जगवन्ती (रोती हुअी) परमेश्वर....परमेश्वर....!

कलावती (हठात् स्वस्थ होकर) रोओ मत, जगवन्ती! रोना पाप है।

(अनिताका हाँफते-हाँफते प्रवेश)

अनिता माँ! क्या भअिया लड़ाअीमें चले गअे।

कलावती (दृढ़तासे) हाँ बेटी! तुम्हारे भअियाने यदुके साथ सैकड़ों जानें बचायीं। वे सकुशल हैं।

अनिता (रामदाससे) सचमुच क्या चाचाजी?

रामदास सच बेटी! अखबार है, तू पढ़ ले न?

(अनिता अचरजसे पढ़ती है। आँखोंमें पानी भर आता है। जगवन्ती पागलोंकी तरह अुसे देखती है। रामदास भी

अुमडते हुअे हृदयसे आँसू रोकता है। केवल कलावती मुसकराती है। अनिता अेकदम पढना बद कर देती है।)

अनिता——चाचा, तुम रोओ मत। म पिताजीसे जाकर कहती हूँ कि भअियाने बहुत सुन्दर काम किया है।

(अनिता झटकर जाती है। कलावती और रामदास भी पीछे-पीछे जाते हैं।)

जगवन्ती (रोती हुअी) ये लोग कितने कठोर हैं, पर मैं क्या करूँ ! जिस दिन अशोक आर यदु मुझे आकर प्रणाम करेंगे, अुसी दिन मैं समझूँगी, परमेश्वरने बड़ा काम किया है। नहीं तो........नहीं........ओह ! मैं भी क्या करूँ !

(वह फूट-फूटकर रो अुठती है। परदा गिरता है।)

तीसरा दृश्य

[समय प्रातः ८ बजे। स्थान दामोदरस्वरूपका वही कमरा। वे लेटे हैं, तीनही दिनमे अुनकी दशा अेक जन्मरोगी-सी हो गअी। मुख पीला पड़ गया है। अुठते-अुठते गिर पड़ते हैं। पासही कलावती बैठी है।]

दामोदरस्वरूप रामसेवक पंडितकी बात कितनी ठीक हो रही है। बच्चा-बच्चा अशोकका नाम लेता है।

कलावती——अैसे पुत्र पाकर हम धन्य हुअे। न-जाने हमने कितने पुण्य किये होंगे...।

दामोदरस्वरूप––मैं चाहता हूँ, अुड़कर असके पास पहुँच जाअूँ और छायाकी तरह अुसके साथ लगा रहूँ। (हठात् चौंक कर) कौन ?

(आवाज सुन पडती है) माँ, पिताजी ! यदु भअिया आये हैं माँ........

कलावती और दामोदरस्वरूप––(अेक साथ) अनिता ! यदु !!

(अनिताका प्रवेश, वह हाँफ रही है।)

अनिता मॉ, पिताजी ! अभी यदु भअिया आये हैं ! वे कहते है, भअिया सकुशल हैं।

कलावती और दामोदरस्वरूप––(अेक साथ) कहाँ है यदु ? यदु कहाँ है ? (अुठनेकी चेष्टा करते हैं।)

अनिता- नहीं, नहीं ! आप अुठिअे नहीं, पिताजी, वे यहीं आ रहे हैं।

(यदुका प्रवेश। जगवन्ती और रामदास भी हैं। यदुनाथ २० वर्षका सॉवला युवक है। असके हाथमें चोट लगी है पर वह खुश है। सबको प्रणाम करता है।)

कलावती और दामोदरस्वरूप (अेक साथ मिलकर) तुम जुग-जुग जिओ, बेटा ! जीते रहो, बेटा !

दामोदरस्वरूप––अशोक कैसा है, यदु ?

यदुनाथ सब ठीक है, ताअूजी ! अुन्होंने ही मुझे भेजा है कि आप लोग दुखी न हो; स्टेशन तक साथ आये थे। शीघ्र ही शान्ति होनेपर वे भी आवेंगे।

दामोदरस्वरूप— अभी तक लोग लड़ रहे हैं? कैसे हैं वहाँके आदमी!

यदुनाथ——आदमी तो हमारे-जैसे ही हैं? पर कभी-कभी आदमीके भीतरका राक्षस जाग पड़ता है।

रामदास— परमात्माकी लीला है, बेटा! जो वह चाहता है वही होता है।

यदुनाथ——(अेकदम तेज होकर) आपके अिस परमेश्वरहीने तो सब अनर्थ किया है। जो परमेश्वर आदमीको आदमीका रक्त पीनेकी प्रेरणा दे, अुसे हम नहीं मानते। अिस परमेश्वरने अितनी सुन्दर पृथ्वीपर अितने भयानक आदमी क्यों पैदा किये....?

रामदास——(सकुचाकर) लेकिन बेटा! अुसकी आज्ञाके बिना पत्ता भी नहीं हिलता। और, वह सब भलेके लिअे करता है।

यदुनाथ——(अुसी तरह) यदि वह सब भलेके लिअे करता है तो क्यों आप लोग पागलोंकी तरह रोते हैं? क्यों नहीं परमेश्वरका विधान मानकर वीर पुरुषोंकी तरह अुत्सव मनाते कि तुम्हारे पुत्रोंने मरती हुअी मानवताकी रक्षा की है?

दामोदरस्वरूप, रामदास और कलावती——(अेक साथ) तुम क्या कहने लगे, बेटा! नहीं-नहीं, बेटा पागल यदु क्या बकने लगा!

जगवन्ती——(रोती-रोती) तू क्या जाने माँ-बापका दिल कैसा होता है!

यदुनाथ— जानता हूँ माँ! मेरे लिअे तुम्हारे प्राण निकल रहे हैं, अशोकको माँ तुम चाहती होगी, पर माँ क्या तुम जानती

हो, हमारे साथ और कितने मॉके लाल हैं। अुनमें सिक्ख हैं, मुसलमान हैं। अुनके लिअे क्या तुम्हारी आँखोंसे पानीका अेक बूँद भी टपका? और जाने दो। माँ, यदि मैं आकर तुमसे कहता माँ, आदमी आदमीके खूनसे होली खेल रहा है। मैं अुसे रोकने जा रहा हूँ। तो क्या तुम जाने देतीं?

(सब अेकदम चुप रह जाते हैं। सन्नाटा छा जाता है।)

यदुनाथ बोलो पिताजी! क्या तुमने हमे कायर नहीं बना डाला? तुम्हारी करुणा, तुम्हारा प्रेम, तुम्हारी विशालता सब स्वार्थकी क्षुद्र सीमामें बँधे हैं।

कलावती यदु! तुम क्या कहने लगे? तुम्हें किसने बताया कि हम नाराज़ हैं। हमें तुमपर अितना गर्व है कि छाती फटी जाती है। बेटा! ये प्रेम, अभिमानके आँसू हैं लेकिन कहो तो, तुमने क्या किया?

यदुनाथ—(शांत होकर) हमने क्या किया यह हम नहीं जानते। अशोकने जो कहा वही किया। वे आयेंगे तो सुना देंगे।

कलावती अशोक सुनावेगा? नहीं यदु! वह भी क्या बोलना जानता है?

यदुनाथ (नम्र होकर) तुम ठीक कहती हो, अशोक भैया बोलना नहीं जानते। लेकिन ताअी! कर्मशील पुरुषोंके वाणी होती ही नहीं, अच्छा! मैं यही कहने आया था कि हम सकुशल हैं, आप लोग चिन्ता न करें। मैं अभी जाअूँगा।

जग०, राम०, दामो०, अनि० (अेक साथ) अभी! अभी जाओगे अिसी वक़्त, अभी!

यदुनाथ हाँ, अभी! अधिक देर नहीं ठहर सकता! अुन लोगोंको छोड़कर क्या मुझे यहाँ बैठना सोहता है?

जगवन्ती—लेकिन बेटा........!

यदुनाथ—लेकिन-वेकिन कुछ नहीं माँ! मैं ज़रूर जाअूँगा। तुमने मुझे देख लिया। दूसरे बेटोंकी माताअें भी तो तरस रही होंगी! पिताजी........!

रामदास (चौंककर) मैं कहता था कि गाड़ी शामको....

यदुनाथ (बीच हीमें) यह कैसे हो सकता है, पिताजी! मैं अिसी गाड़ीसे जाअूँगा।

रामदास (अुद्विग्नताको रोककर) अच्छा, अच्छा! मैं अभी जाता हूँ। (अेक क्षण रुककर) मैं कहता था कि मैं भी तुम्हारे साथ चलूँ तो........।

जगवन्ती हाँ, हाँ, तुम ज़रूर चले जाओ।

यदुनाथ—नहीं पिताजी! केवल मैं जाअूँगा। और अभी जाअूँगा। आप अभी ताँगा मँगा दीजिअे!

(ताँगा मँगानेके लिअे रामदास जाता है।)

यदुनाथ (हँसकर) अिस धर्मने आदमीको आदमीका खून पीना सिखाया है। अिस अीश्वरने ही हमको कायर बना दिया है!

जगवन्ती लेकिन मैं कहती थी, तू खाना खा ले।

यदुनाथ नहीं माँ! (अेक क्षण रुककर) अच्छा, चलो।

(जगवन्ती जल्दीसे चली आती है।)

यदुनाथ (अुठकर) मैं अब जाअुँ?

दामोदरस्वरूप (अनसुनी करके) यदु बेटा! क्या सचमुच अशोकका नाम लोग श्रद्धासे लेते हैं?

यदुनाथ हाँ ताअूजी! अशोक भअियाने वह काम किया है जो बड़ी-बड़ी आत्माअें नहीं कर सकती।

दामोदरस्वरूप सचमुच तुम अैसा समझते हो यदु?

यदुनाथ——मै कहता हूँ, अशोक भअिया सदाके लिअे अमर हैं।

दामोदरस्वरूप (गद्गद होकर) तुम जुग-जुग जीओ, बेटा! (अेक क्षण रुककर) कुछ भी हो, दुनिया कहेगी, दामोदर गरीब था लेकिन सन्तानके प्रति अुसने अपना कर्तव्य पूरा किया।

(तभी रामदासकी आवाज सुनाअी देती है——'यदु! ताँगा आ गया है।' यदु उठता है। अनिता और कलावती भी अुठती हैं।)

यदुनाथ नमस्कार ताअूजी!

दामोदरस्वरूप परमात्मा तुम्हें कुशलसे रखे, बेटा! तुम जल्दी लौट आना।

(कलावती अुसे छातीसे लगाकर माथा चूम लेती हैं। आँखोंमें पानी भर आता है! यदु चुपचाप बाहर निकल आता है। केवल अनिता साथ आती है।)

अनिता यदु भअिया ! तुम अुन सबसे कहना कि तुम्हारी बहिन अनिताको तुम-जैसे भाअियोंपर बड़ा गर्व हो रहा है। वहाँसे लौटो तो अेक बार यहाँ अवश्य आना—मैं बाट देखूँगी। अच्छा !

(अनिता बड़ी शीघ्रतासे यह सब कुछ कह गअी। अुसकी आँखें भर आयीं पर वह मुसकरा अुठी। यदु अुसे कुछ कहे कि वह झपटकर लौट गयी। वह देखता ही रह गया।)

(पटाक्षेप)

चौथा दृश्य

[वही विशाल भवन, वही दामोस्वरूपका कमरा। अब अुसमें केवल अेक चारपाअी है। अुसपर अुनका अेकमात्र बेटा अशोक लेटा हैं। अुसे खूब तेज बुखार चढा है। अुसके सिर, हाथ और पैरोंपर पट्टियाँ बँधी हैं। पट्टियोंपर जगह-जगह लहू चमक आता है। अुसकी आँखें बन्द हैं।

दामोदरस्वरूप कुण्ठित, मलिन अुसके सिरहानेकी तरफ फर्शपर बैठे हैं। कलावती पागल-सी बेटेको देख रही है। अलग कोनेमें अनिता है जो क्षणमें गम्भीर और क्षणमें द्रवित हो अुठती है।

फर्शपर दामोदरके पास, रामदास, जगवन्ती, यदु और पाँच-छः नवयुवक बैठे हैं। वे सब दुःख और सुखमें फँसे अशोककी ओर देख रहे हैं।

डॉक्टर भी है। वह गौरसे अशोककी परीक्षा कर रहा है।]

डॉक्टर (गम्भीर होकर) मैं अिन्हें होशमें ला सकता हूँ परन्तु...।

दामोदरस्वरूप परन्तु क्या डॉक्टर साहब ?

डाक्टर मैं कहता था, रात गुजर जाती तो ठीक था।

दामोदरस्वरूप डाक्टर साहब! मैं गरीब हूँ पर अशोकके लिअे जो कहोगे वही करूँगा। जो माँगोगे वही दूँगा। दुनिया नहीं कह सकेगी कि दामोदर बेटेके लिअे कुछ करनेमें झिझका था।

डॉक्टर नहीं! मैं यह नहीं सोचता। अशोकके लिअे मै कुछ कर सका तो धन्य हूँगा।

अेक युवक डॉक्टर! मुझे अचरज है, भअियाके प्राण कहाँ अटके हैं।

दूसरा युवक ये अकेले ही तो स्टेशनसे लौट रहे थे कि पाँच सौ मजहबी दीवानोंने घेर लिया।

तीसरा युवक डाक्टर! जिसने सैकड़ों जानें बचाअी अुसका यह अन्त। (सहसा अशोक आँखें खोल लेता है)

अशोक (क्षीण स्वरमें) माँ!

कलावती (अतिशय गद्‌गद् होकर) हाँ बेटा!

अशोक कौन रोता था, माँ! तुम थीं? तुम रोओ नहीं। मैं अच्छा हो जाअूँगा और न भी हुआ तो भी तुम रोना मत। अेकके बदले असंख्य अशोक तुम्हें मिलेंगे, माँ!

कलावती- मैं नहीं रोती, बेटा! मैं रोअूँगी क्यों?

अशोक अनिता कहाँ है ?

अनिता (चौंककर) भअिया !

अशोक अनिता ! तूने बुलाया था न ! हम आये हैं, क्या कहती है तू ! आरती करनी होगी ! जा बुला ला अपनी सखियोंको और अपने जी की निकाल ले........!

[अशोक फिर आँखें बन्द कर लेता है। देशके प्रसिद्ध नेता डाक्टर अमृतराम प्रवेश करते हैं।]

अमृतराम कहाँ है, अशोक ?

दामोदरस्वरूप (अुठकर) अिधर है अिधर। आप, यहाँ आअिये (प्रफुल्लित होकर) अब डर नहीं है। आप आये हैं। परमेश्वरने आपको भेजा है आप जरूर अशोकको बचा लेंगे।

अमृतराम आप अशोकके पिता हैं ?

दामोदरस्वरूप (गर्वसे) जी हाँ ! मैं अशोकका पिता हूँ। यह माँ है, वह बहिन अनिता है। मैं अशोकके लिये कुछ भी अुठा न रखूँगा।

[अमृतराम गम्भीर होकर अशोककी जाँच करते हैं। अुनका चेहरा चिन्तित हो जाता है।]

अमृतराम अच्छा हो यह रात शांतिसे बीत जाय।

अशोक पिताजी ! (अशोक आँखें खोल देता है)

दामोदरस्वरूप तुम बोलो मत, बेटा !

अशोक यदु कहां है ?

यदुनाथ (आगे बढ़कर) मैं यहां हूँ।

अशोक तुम जानते हो यदु, हमने क्या प्रतिज्ञा की थी ? मेरे माँ-बाप को मालूम न होने देना कि अशोक अब दुनियामें नहीं है।

यदुनाथ (चुपचाप नीची गरदन करके आँसू टपकाने लगता है) तुम अैसा क्यों कहते हो अशोक !

[अशोक नहीं बोलता। सब फिर चिन्तातुर होकर अेक-दूसरे को देखते हैं]

अमृतराम (हठात् चौंककर) पक्षी अुड़ना चाहता है !

कलावती, दामोदरस्वरूप, अनिता (घबराकर अेक साथ) क्या आ-आ ?

रामदास, जगवन्ती--[अेक साथ] आप देखिये तो डाक्टर साहेब !

अमृतराम--[सिर हिलाकर] देख तो रहा हूँ, खेल समाप्त हो चुका है। अेक दिव्यात्मा पृथ्वी पर अुतरी थी आज लौट गयी !

(सब हठात् पिघल अठते हैं। कलावती हा हा करके अशोकसे लिपट जाती है, जगवन्ती अुसे सम्हालती है)

दामोदरस्वरूप (सहसा जाकर) क्या करती हो कलावती ! रोती हो ! अशोकने कहा था रोना मत, और तुम अशोककी बात टालती हो।

(कलावती नहीं सुनती। अुसकी छाती फट गअी है ; अुसकी वाणी कमरे, दीवारोंको कँपा देती है। सब सोये हुअे-से अुठते हैं। अमृतराम बाहर निकल जाते हैं)

कलावती (बिलखती हुअी) मैं माँ हूँ माँ। मेरा सिर, मेरा मांस....

दामोदरस्वरूप लेकिन मैं बाप हूँ। अशोकका बाप हूँ। अशोक वीरपुत्र था। मैं वीरपुत्रका वीर बाप बनूंगा! सुनो यदु, रामदास, अनिता, अनवर, शमशेर, राजेन्द्र! तुम सब सुनो। मुझे अशोकपर गर्व है! मै दुनियाको कहने का मौका न दूँगा कि अशोक-जैसी महान और दिव्य आत्माका पिता दामोदरस्वरूप रोया था। मै हँसूँगा!

(सचमुच दामोदरस्वरूप बड़े जोरसे हँस पड़ता है)

अनिता (अनिताको छातीमें भरकर) अशोककी बहिन होकर रोती हो। तुझे अशोक चाहिअे न? देख कितने अशोक हैं। यदु, अनवर आदि-आदि सब तेरे अशोक हैं और अनिता, यह अखंड भारत अनेक अशोकोसे भरा पड़ा है, फिर तू क्यों रोती है?

(दामोदरस्वरूप फिर हँस पड़ते हैं। सब युवक हतप्रभ अुस दुबलेपतले अधेड़ पुरुषके साहस को देखते हैं। सहसा यदु आगे बढ़कर कलावतीको अुठा लेता है।)

यदुनाथ माँ! तुम हम सबकी माँ हो! भारतके समस्त पुत्र अशोकके पद-चिन्ह पर चल सकें।

शमशेर, रामदास, अनिता, और अनवर (अेक साथ बोलते हैं)

माँ ! हम मानवके रक्तको व्यर्थ न जाने देंगे ।

माँ ! हम सारे हिन्दुस्तानमें अशोकही अशोक पैदा कर देंगे !

माँ ! तुम नये हिन्दुस्तानकी माँ हो !

(सहसा कलावती अुठकर अुन्हें देखती है । अुसकी आँखें चमक अुठती हैं । दामोदरस्वरूप धीरे-धीरे अशोकके बालोंमें अुँगली फेरते हैं । अमृतराम अन्दर आते है ।)

अमृतराम बाहर अपार जनता है यदु ! अशोकको ले चलो !

दामोदरस्वरूप (अुठकर) चलिअे डाक्टर साहब हम तैयार हैं !

(और वे स्थिरगतिसे बाहर चले जाते हैं । अुन्होंने कुहनी अुठाकर आँखें पोंछ ली हैं । रामदास अुनके पीछे जाता है अुसकी आँखें गीली हैं ।)

(पर्दा गिर जाता है)